लोकसभा

मूल्य बीस रुपये (20 00)

प्रथम संस्करण 1983,
SHOK SABHA (Novelized Drama) by Himanshu Srivastav.

लेखकीय

पिछले कुछेक वर्षों में मेरे समकालीन और समवयींय कई मित्रों ने अपने गर्दिश के दिनों की संक्षिप्त झाँकियाँ लिपिबद्ध कीं। मैंने ऐसा नहीं किया। यह अकारण नहीं। दरअसल मैं उस हमदम की तलाश में हूँ जो सकून देते हुए मुझे यह बता सके कि तुम्हारे गर्दिश के दिन दफ़न हो चुके हैं और अब तुम सुख-चैन के कमरे में बैठकर बाँसुरी टेर रहे हो। मगर अफ़सोस अब तक ऐसा कोई हिम्मतवर हमदम मिला नहीं।

कोई 'एकवचन' आनन्दभूमि में प्रवेश कर गया तो क्या हुआ? 'बहुवचन' आदरवचन' तो घोर बासदीयुक्त अन्धकूप में होंठों को हथेली से ढँककर खाँस ही रहा है। किन्तु इसका अर्थ यह भी नहीं कि 'लोकसभा' के नायक का दर्द मेरा दर्द है या मेरा ही दर्द है। मैं उन लोगों में नहीं जो ऐसा मानते हैं कि यक्षिणी के विरह में यक्ष नहीं बल्कि विद्योत्तमा के वियोग में स्वयं कविश्रेष्ठ कालिदास रोये थे और उन्हीं क्षणों की अनुभूतियाँ 'मेघदूतम्' के अमृतछन्द बन गईं।

इल्मो-अदब के लिहाज से अपने मुल्क का हाल बेहाल है। कला-संस्कृति के रक्षकों की जन्मकुण्डली में संशोधन करने को वे महाप्रभु बैठ गए हैं, जो नहीं जानते कि कला और संस्कृति क्या है। इसीलिए एक कलाकार के दर्द की तस्वीर खींचकर मैंने यह पेशकश की है कि वे चन्द रक्तस्नात् संडसियाँ तब तक हमारे कुण्डलीचक्र को बनाती-बिगाड़ती रहेंगी, जब तक जनसमाज स्वयं उठकर उन संडसियों को मरोड़ डालने की दिशा में शंखनाद नहीं करेगा।

कुछ और? नहीं अब कुछ और नहीं।

बेलवरगंज
पटना-800007

—हिमांशु श्रीवास्तव

व्यग्यशिल्पी
शरद जोशी
को
जो अनदेखे ही मुझे चाहने लगे

1

पूर्वी !

कितना संक्षिप्त ! कितना सुहाना !!

बड़ा ही प्यारा नाम है वायलिन की इस जादूगरनी का। और बैठक से बाहर निकलते ही इसके बारे में ललित बाबू ने रिमार्क कसा "यह अपने को कलाकार कहती है कलाकार ! छिः ! लोग कहते हैं, यह अपने बाप के स्वभाव पर गई है। मगर, यह एकदम गलत बात है। पैसों के मामले में मुर्दाघाट के डोम से भी गई-गुजरी है।

आगे बढ़ते हुए अमरपाल ने गर्दन घुमा कर पूर्वी के मकान पर एक नजर डाली। *इस नजर में जैसे पूर्वी के प्रति हिकारत भी तौबा भी आनन्द* और मलामत भी। बोला 'अब तक कलाकारों के बारे में जो कुछ सुना जा सकता है सब गलत सुना था। कलाकार दौलत से नफ़रत करते हैं, और यह दौलत पर फ़िदा रहती है।

"और मज़े की बात यह है कि ।"

'क्या ?

ललित बाबू ने कहा 'क्वांरी है। न आदमी न औलाद।"

अमरपाल बोला 'अमां तुम ज़मीन छोड़कर हवाई जहाज की तरह हवा में उड़ते हो। जब आदमी ही नहीं तो औलाद कहां से ?'

"अरे हां ।' ललित को अपनी गलती समझ में आ गई।

अमरपाल ने कहा 'मगर इसका दूसरा पहलू भी है।

क्या ?" आगे बढ़ते हुए ललित ने पूछा।

अमरपाल कहने लगा 'आदमी का सीधा-सादा अर्थ है—एक मर्द आदमी एक पुरुष। वह स्वस्थ और रोगमुक्त हो तो औलाद दे सकता है। मगर सवाल उठता है—अपना आदमी है या नहीं ? यानी कानून द्वारा दिया गया आदमी। आदमी अगर ऐसा आदमी नहीं है और वह किसी कुमारी को औलाद दे देता है, तो उसकी पूरी ज़िन्दगी को बेमज़ा कर देता

है। ऐसे आदमी से मिली एक औलाद हजार बददुआओ से भी ज्यादा परेशानी मे डालने वाली साबित होती है।"

ललित बाबू बोले, "हा, यह तो है।"

अमरपाल ने पूछा, "इस माने मे यह कैसी है ?"

ललित बाबू को कुछ सोचना पड गया। पूर्वी ने पहले ही उनका दिल जला दिया था। मगर, फिर भी सकोच प्रदर्शित करते हुए बोले, "छोडिये, वैसी बातें बोलने से जुबान गन्दी होती है।"

अमरपाल ने जैसे बिना जाल डाले अच्छी-खासी मछली पकड ली थी। कहा, "बस, बस। जुबान गन्दी करने की जरूरत नही। सब कुछ समझ बाबू गया।"

"क्या समझ गए ?" ललित ने पूछा।

"यही कि बुलबुल अधेरे-अकेले मे तराने छेडती है।"

'रसना' शब्द दो अर्थो को ध्वनित करता है। ज्ञानियो ने इस पर भी नियन्त्रण करने को कहा है—स्वादानुभूति और वाणी के सन्दर्भ मे। सुस्वादु खाद्य पदार्थ का ग्रहण उस सीमा के बाद वर्जित है, जिस सीमा के बाद वह स्वास्थ्य को हानि पहुचाने वाला हो जाए और अभिव्यक्ति की स्वतन्त्रता पर नीतिकार वहा निषेध करते हैं, जहा उससे पर-अहित होता है। समाज का जो व्यक्ति इन अर्थो मे रसना पर नियन्त्रण करके चलता है, वह योगियो मे योगिश्रेष्ठ कहलाने का अधिकारी है।

ललित बाबू जैसे लोग रसना को अपनी अनुगत, अपनी दासी न बना कर स्वय उसके अनुगत और दास बन जाते हैं। अमरपाल के यह कहने पर कि 'बुलबुल अधेरे-अकेले मे तराने छेडती है' वह अपनी रसना के वश मे हो आए और अमरपाल की कुहनी पकड कर हिलाते हुए बोले, "इसके बारे मे ताल ठोक कर कुछ कहना तो मुश्किल है, मगर यह तो बहुत सारे लोग जानते हैं कि दिवाकर मलिक की दो और कन्याओ मे से एक ने आत्महत्या कर ली और दूसरी किसी को ले कर निकल गई।"

"किसी को लेकर निकल गई ?"

"हा, निकल ही गई। मगर, एक बात बतलाऊ। मैंने उसे कई बार

देखा था।"

"कैसी थी ?"

मलित बाबू ने स्मरण करते हुए बतलाया "सुन्दर थी सब कुछ भरा पूरा था। लेकिन हां इस पूर्वी के मुकाबले नहीं थी। पूर्वी गम्भीर है, वह चंचल थी। पूर्वी की आंखों में रीतापन है। यह हमेशा रीती-रीती निगाहों से देखती है। उसकी आंखों में बल्वए-बनाना था। गोया एक में बोतल और दूसरी में पैमाना था। वह जिस आदमी की ओर देखती भी भर कर देखती।"

"तभी यह गुल खिलाया उसने।"

"मगर अमरपाल जी " मलित बाबू ने आगे कहा "जिसने चुपचाप आत्महत्या कर ली वह कुछ और ही थी।

"मतलब ?" अमरपाल ने पूछा।

"वह ईसा की बेटी थी।" मलित बाबू ने निःसंकोच कहा।

शहर के कई ऐसे मुहल्ले थे जहां कुछ लोग गाने-बजाने के बेहद शौकीन थे, संगीत-गोष्ठियों या सम्मेलनों का आयोजन करने में इनकी विशेष रुचि होती। मगर ले-दे कर मलिक परिवार ही ऐसा था जो संगीत के प्रति समर्पित था। संगीत ही जीवन संगीत ही आजीविका। दिवाकर के पिता प्रसिद्ध पखावजवादक थे दादा अपने युग के इने-गिने कमाल गायकों में से थे और दिवाकर को एक संगीत-सम्मेलन में 'नृत्य सम्राट' कह कर अभिनन्दित किया गया था। पूर्वी उनकी ही तीसरी और अन्तिम सन्तान थी।

कहते हैं दिवाकर ने कैसी कंचनकाया पायी थी उनकी वाणी में भी अमृतोपम माधुर्य उसी तुलना में परिपूरित था। मित्रों की प्रत्येक भंगिमा सुरुचियों का आकर्षणकेन्द्र होती। बहुत ही कम बोलते और जो कुछ बोलते सुननेवाला उसे बार-बार सुनना चाहता। नर्तकोचित काली-काली घुंघराली केशराशि ऐसी थी कि उसे देख कर एक-से-एक सुकेशियां ईर्ष्याविदग्ध हो उठतीं। शुभ्र वर्ण हर अंग को तराशने में विधाता ने आलोचक की दृष्टि और सौन्दर्यशास्त्रसिद्ध संगतराश की छेनी का उपयोग किया था। नृत्य करने के लिए जब मंच पर आते तो पाजेब के छि

ही दर्शक आनन्दविभोर जाते । आखें वस एक ही दिशा को पहुच जिधर दिवाकर होते ।

लेकिन इस कलाकार का अन्त किस रूप मे हुआ, इसी की वेटी वायलिन की जादूगरनी, पूर्वी, पैसे को क्यो खुदा मानने लगी ? सवाल का जवाव देने के लिए कौन आगे आएगा ?

कभी-कभी जिनसे बात टूट गई और जो वापस चले गए, वे दिवाकर मलिक को एक बारात में नृत्य प्रस्तुत करने के लिए ले जाने वाले थे। धीरे-धीरे सारी बातों की जानकारी होने पर दिवाकर ने अपनी असमर्थता जाहिर करते हुए कहा, "क्षमा कीजिएगा मैं बारातों में नृत्य नहीं करता।'

उधर से आए लोगों में से एक ने कहा 'आपको उसी रोज इन्कार कर देना चाहिए था जिस रोज हम आपसे पहली बार मिल कर एडवान्स दे गए थे।

दिवाकर बोले "उस रोज आप लोग बड़ी जल्दी में थे। मुझे रुपया पकड़ा कर चले गए। आपने संकेत तक नहीं किया कि मुझे बारात में नाचना होगा।"

उधर से दूसरा बोला, "बारात में नाचना हो या किसी संगीत सम्मेलन में नाचना तो बस नाचना है। आपको जो मिलना चाहिए, हमने उसमें तो कोई कमी नहीं की।

दिवाकर का शामी-शील शायद ही कभी भंग हुआ हो। इस स्थिति में भी संयमशील बने रहे। बोले "आप नाराज न हों। आपके दिए हुए रुपये ज्यों-के-त्यों रखे हुए हैं। वापस किए देता हूं। और उठ कर घर में रुपये लेने चल आए। दमयन्ती से बोले, 'मंगलवार को जो रुपये तुम्हें रख देने को दिए थे उन्हें दो।"

"क्यों, क्या बात है ?

"पीछे बतलाऊंगा। दो तो सही।'

बैठक में तीन सज्जन थे

रमाप्रसाद शिवमंगल और गुप्तेश्वर।

विवाह गुप्तेश्वर के छोटे भाई का था। बहुत बड़ी दुकान है इनकी। शिवमंगल एक

और रामप्रसाद किराना मर्चेण्ट हैं। दोस्तो मे से किसी के मुह से निकल गया, "किसी वाई जी के चक्कर मे न पडो। कोई वढिया डासर ले चलो। वडा रग रहेगा।"

"वतलाइए आप लोग, किसे ले चला जाए। मुझे तो कोई ढग का डासर ही नज़र नही आता।" गुप्तेश्वर ने कहा था।

दूसरे दोस्तो ने सुझाया, "दिवाकर मलिक को ले चलो। एकदम से थेई-थेई मच जाएगी। कन्या पक्ष वाले भी याद करेंगे कि कोई वारात आई थी। दिवाकर जी का नाम वैसे भी चारो ओर फैला हुआ है। मगर हा, चम्मच-चम्मच-भर घी डालोगे, तो पूडिया नही छनेंगी।"

इस पर गुप्तेश्वर ने जैसे कमर कस कर कहा, "चम्मच-चम्मच-भर की क्या वात है जी, कहो न, मैं पीपा ही उडेल दू, मगर भीड़ नही लगेगी। वाई जी लोगो की वात ही कुछ और होती है।"

किराना मर्चेण्ट रामप्रसाद ने एक वारीक वात कही, "वैसे तो घर की मुर्गी दाल वरावर होती ही है, मगर दिवाकर मलिक और किसी वाई जी को एक ही तराजू पर नही तौला जा सकता। वाई जी लोगो का नाच देखने से ईमान खराव होने के सिवा कुछ नही होता।"

और, अन्त मे शिवमगल ने जो कुछ कहा, उसे अन्तिम मान लिया गया। उसने कहा था, "दिवाकर जी की विदाई भारी रकम से होती है। मगर थोडे मे ही काम वन जाएगा। सुना है, आजकल उनकी पूछ कम हो गई है। ईदे-वकरीदे कही से वुलावा आ जाता है, नही तो सोलहो दण्ड एकादशी चलती है। भूखे पेट को वासी भी मिल जाए, तो मज़े मे हज़म हो जाता है। गाय दान नही करना पडेगा, नाम लेते ही वैतरणी का दूसरा किनारा सामने नज़र आएगा।"

गुप्तेश्वर को शका हुई। जैसे किसी ने गुदगुदा दिया हो, उसने उचक कर पूछा, "मतलव ?"

शिवमगल ने शका-समाधान किया, "दिवाकर मलिक सोचेंगे कि भूत की लगोटी भली। दरवाज़े पर आयी हुई लक्ष्मी को लौटाना ठीक नही। सौ का पत्ता हम पहले फेंक आएगे और जिस दिन वारात लौटेगी, एक धोती और ग्यारह रुपये से···।"

रामप्रसाद ने हस्तक्षेप करते हुए कहा 'ग्यारह रुपयों से नहीं कम-से कम पच्चीस तो जरूर।'

गुप्तेश्वर न कहा था 'और, ग्यारह से भी काम चल जाएगा। पच्चीस-पचास तो उनको ऐसे भी मिल जाएंगे। नाच देखने वाले उनके आगे क्या इससे कुछ कम फेंकेंगे ?"

शिवमंगल कुछ सोच कर बोला, नहीं नहीं यह नहीं हो सकता। अगर ऐसा हुआ तो दिवाकर मलिक तुरन्त पाजेब खोल बैठेंगे। उनके नाचते वक्त हल्लड़बाजी नहीं चलेगी।

"अच्छा न सही। चलो पच्चीस ही दे दूंगा। ऊपर से सिल्क का एक गमछा भी दे दूं तो क्या कोई हर्ज है ?

'फिर क्या कहने हैं' गुप्तेश्वर, यह तो तुमने सोने में सुगन्ध वाली बात कह दी।'

और, यह बात अब निर्विरोध तय हो गई कि दिवाकर मलिक बारात में एक नर्तक की हैसियत से ले जाए जाएंगे। लेकिन जब दिवाकर को वास्तविकता बतलायी गई तो देखा गया कि हंस ने कीड़े-मकोड़ों की ओर से आँखें फेर लीं। सौ रुपए लौटाते हुए दिवाकर मलिक ने कहा, भरने की बात है। आज तक मैं किसी भी बारात में नृत्य प्रदर्शन के नहीं गया। आप लोग राजा आदमी हैं बहुत सारे कलाकार मिल जा मुझे क्षमा कर दीजिए' जी हां आप लोगों ने मुझे स्मरण किया मेरा सौभाग्य है जी हां। और दोनों हाथ जोड़ दिए। उनके मे कृतज्ञता के भाव छलक रहे थे। उठते हुए शिवमंगल ने कहा था " जी हम लोग किसी बाई जी को नहीं ले जाना चाहते इज्जत की ठहरी।

दिवाकर ने तीनों की ओर देखते हुए कहा 'ना ना ऐसा न संगीतकला को जीवित रखने में उनकी त्याग-तपस्या भी सराहना के है। मैं उन लोगों के साथ नाचता नहीं यह दूसरी बात है। परन्तु, मैं घृणा भी नहीं करता। अच्छा नमस्कार'।

बस वे अभी-अभी वापस चल गए हैं। दिवाकर मलिक उन्हें सुपारी, इलायची खिलाकर विदा करना चाहते थे। पूर्णी को पास की!

पर भेजा था, पर वह समय पर बीड़े लेकर लौटी ही नहीं। उनके चले जाने पर पूर्वी ने पिता के सामने आकर कहा, "पानवाले ने देने से इन्कार कर दिया। कहा, पहले के बहुत पैसे बाकी हैं। अब उधार-खाता नहीं चलेगा।"

दमयन्ती ने अपना विचार प्रकट किया, "अब इसे इधर-उधर न भेजा करो। इधर-उधर जाने की उम्र गुज़रती जा रही है।"

एक दीर्घ निःश्वास छोड़कर दिवाकर कहते हैं, "दमयन्ती, तुम्हारा कहना कुछ बेजा नहीं है।"

पूर्वी वहां से हट कर जाने किधर खिसक गई है। तीन साल पहले पिता के साथ संगीत-समारोह में ग्वालियर गई थी। एक बुजुर्ग वायलिन-वादक के पास दो वायलिनें थीं। उसने पूर्वी को प्यार करते हुए कहा, "बिटिया, तुम बहुत बड़े कलाकार की बेटी हो। तुम कोई साज़ बजाना सीखो।"

"अच्छा।" पूर्वी बोली थी।

बुजुर्ग वायलिन-वादक ने पूछा, "तुम कौन-सा साज़ बजाना सीखना चाहती हो?"

पूर्वी ने सहज भाव से कहा, "वायलिन।"

"ओह हो, मेरे रास्ते पर चलोगी?" वायलिन-वादक ने आह्लादित होते हुए कहा, "भई, वाह! मेरे पास दो वायलिनें हैं। एक तुम ले लो। पहले थोड़ा सीख लो। फिर नई ले लेना। वैसे इसके तार भी सधे हुए हैं।" और उसे अपनी पुरानी वाली वायलिन दे दी।

उस वक़्त तो जैसे पूर्वी की समझ में कुछ नहीं आया कि यह क्या हो रहा है। दिवाकर मलिक पास ही थे। इच्छा हुई, पूर्वी को वायलिन न लेने दें। पर, एक कलाकार दूसरे कलाकार के हृदय को ठेस नहीं पहुंचाता। पूर्वी ने भी तो ललच कर नहीं कहा था कि उसे वायलिन चाहिए। दिवाकर दो क्षण मौन रहे और फिर पूर्वी से बोले, "पूर्वी, सिर्फ वायलिन लेने से काम नहीं चलेगा। इनके पांव छुओ। कला गुरुजनों के आशीर्वाद और साधना से मिलती है...।"

ग्यारहवर्षीया पूर्वी ने बुजुर्ग वायलिन-वादक के चरणों पर अपना शीश नवा दिया। उसके नेत्र सजल हो आए। मुंह से निकला, "मैं पता नहीं वह दिन देख सकूंगा या नहीं मगर मेरी यह दुआ है कि इस फ़न की तुम ऐसी हस्ती बनोगी कि जिस संगीत की महफ़िल में एक बार बजा दोगी, वहां का सारा जलसा तुम्हारे आसपास सिमट आएगा।"

पूर्वी वहां से खिसक कर उसी पुरानी वायलिन पर रागबहार बजाने लगी थी। पति से सारी बातें सुन लेने के बाद दमयन्ती ने बड़े संकोच से कहा "दूधवाले को तो मैंने कह दिया है कि अभी दूध मत दो।

"बहुत ठीक किया।

"मगर वह पैसे मांग रहा है।"

"दिया जाएगा।"

"और धोबी को क्या कहूं?"

"क्या उसके भी पैसे निकल रहे हैं?

"हां निकल रहे हैं।"

दिवाकर मलिक बोले "कह देना उसके भी पैसे डूबेंगे नहीं।"

"वह कहता है, बहुत ज़रूरी है। दमयन्ती बोली।

"घर में आटा कितने रोज का है? दिवाकर मलिक ने प्रश्न किया।

"तीन रोज तो ज़रूर चलेगा।

"अच्छा, देखा जाएगा।

"धोबी का ।

दिवाकर मलिक ने बीच में ही कहा "देखो शाम तक कुछ न कुछ करूंगा। भई जिसका बाकी है वह तो मांगेगा ही।"

"हां ।"

दिवाकर मलिक चारपाई पर बैठ गए। बड़े ही थके हुए स्वर में बोले "दमयन्ती आज मन कुछ अस्वस्थ जान पड़ता है। अभ्यास नहीं कर पाऊंगा।

"छोड़ो क्या बुढ़ापे तक रियाज़ ही करते रहोगे?"

दिवाकर मलिक ने कहा "बुढ़ापे तक? यह क्या कहती हो दमयन्ती? फ़न तो हमेशा-हमेशा रियाज़ ही होता है।"

दमयन्ती को कुछ याद आ गया है। वह बैठक से निकल कर भीतर चली जाती है। पूर्वी वायलिन बजा रही है। स्वर कभी टूट जाता है, कभी एकरूप हो जाता है। उसकी आंखों के सामने अपनी दो बड़ी बहनों की तस्वीरें टंगी हैं—कल्याणी और वागेश्वरी की। पूर्वी उन्हें देखने लगती है।

3

पीड़ामय जीवन का इतिहास जिस शान्त झूले पर रखकर ढंक दिया गया था, वह झूला एकाएक झूलने लगता है। इतिहास का तवारीख का एक सफ़ा फड़फड़ा कर जब आँखों के सामने आता है, तो हम एक स्टेज देखते हैं।

लाइट चमककर जगा जाती है।

दिवाकर मलिक का छोटा-सा मकान।

मकान के भीतर एक खास कमरा। दक्षिण ओर वाली दीवार में ऊपर की ओर एक खिड़की है लकड़ी की जो गलियारे की ओर खुलती होगी इस समय वह बन्द है। इसी दक्षिण ओर वाली दीवार में छोटी-छोटी दो आलमारियां बनी हैं। दोनों में नृत्य का सामान सहेज कर रखा गया है। कृष्ण और शंकर के समस्त वस्त्राभूषण मोरपंख मुकुट मकराकृत कुण्डल, बंसी डमरू चिमटा मृगछाल और चौड़ी पट्टियों पर गुँथे घुंघरूगुच्छ। मृदंग और पखावज उस चबूतरे पर एक कोने में रखे हुए हैं जिसे देखने से स्पष्ट आभास होता है कि इस चबूतरे पर नृत्याभ्यास किया जाता होगा। लम्बी-चौड़ी दरी इस प्रकार बिछी है कि कहीं नाम का सिकुड़न नहीं। ऊपर सफेद चादर—धूप में धुली। चार लम्बे-लम्बे गोलाकार तकिये। दो के खोल सफ़ेद कपड़े के हैं और दो पर रेशमी खोल। रेशमी खोलों का रंग हल्का पीला है नारंगी बर्डर के। छत से चंदोवा तना है। उसके चारों किनारों पर चुनटदार झालर लगे हुए हैं। बहुत ही हल्के हरे रंग से दीवारें रंगी हुई हैं। सात फुट की ऊंचाई पर करीने से देश के बड़े-बड़े नर्तकों की तस्वीरें टंगी हैं। शीशे के उस पार से जैसे वे सामने की ओर देख रहे हैं। दक्षिण की दीवार में जो छोटी-छोटी दो आलमारियां हैं उन दोनों आल-मारियों के बीच में दिवाकर मलिक के पितामह और पिता के चित्र नजर आ रहे हैं। उनके फ्रेम सुनहले हैं।

लाइट चबूतरे पर जाती है। सफेद धोती और हल्के पीले भूरे रंग की

गजी पहने दिवाकर मलिक एक तकिये को खीच कर जैसे ही लेटना चाहते हैं कि सामने से दमयन्ती आ जाती है। पूछती है, "क्या कह रहे थे ?"

"पूर्वी कहा है ?"

"स्कूल गई।"

"क्या खाया उसने ?

" ...।" दमयन्ती चुप।

"क्या भूखे पेट चली गई ?"

"नही ।"

"तो ?"

"रात की थोडी सब्जी बची हुई थी। वही खाकर चली गई।"

"अरे · !" दिवाकर मलिक कुछ और नही कहते। दमयन्ती की ओर से आखें फेर लेते हैं और तकिये को खीच कर अपने सिर के पास ले आते हैं। फिर एकाएक मुह फेरे ही बोलते हैं, "बहुत भारी ग़लती कर गया मैं। कल बारात मे नाचने वाली की बात स्वीकार कर लेनी चाहिए थी।"

"छि ! यह क्या कहने लगे ?"

"ठीक कह रहा हू, दमयन्ती !"

"नही, गलत कह रहे हो। यह सब एक आधी है जो थोडे दिनो बाद निकल जाएगी।"

"और अपने साथ हमे भी आसमान मे उछाल देगी।" दिवाकर मलिक दमयन्ती की ओर घूमकर आगे कहते हैं, "मेरी तबियत कुछ सुस्त लग रही है। मैं सोऊगा।"

"ठीक है, सो रहो।"

"मगर तुम एक बात का ध्यान रखना। फिजूल लोगो से मिलने के लिए मुझे मत जगाना। कह देना, घर मे नही हैं।"

"अच्छा।"

दमयन्ती कमरे से बाहर निकलती है। दिवाकर मलिक पेट के बल सो रहते हैं।

सारी बत्तियां बुझ चुकी हैं। साज बजाने वाले निष्क्रिय हो चुके हैं। उनकी उंगलियों के अगले पोर कटे हुए दीख रहे हैं। वे गुड़मुड़ी हो गई हैं। नेपथ्य का काला पर्दा बिना हवा के धीरे-धीरे कांप रहा है। उसके बीच में एक बड़ा-सा लाल प्रश्नचिह्न बना हुआ है। स्टेज की छत से एक हल्की-सी रोशनी उतरती है और उस प्रश्नचिह्न पर बिखर जाती है

विचित्र है यह स्टेज!

दर्शकों को गिन पाना मुश्किल है। वे करोड़ों की संख्या में हैं और उन सबने अपनी-अपनी आंखों पर काली पट्टियां चढ़ा ली हैं। उनकी बांहों पर एक-एक चौड़ा बिल्ला लगा हुआ है जिस पर सुन्दर अक्षरों में लिखा हुआ है

'हम शुद्ध कला के प्यासे हैं।

पूरी दर्शकदीर्घा में सन्नाटा छाया हुआ है। कोई किसी से बातें नहीं कर रहा है। लगता है सभी एक-दूसरे के लिए अजनबी हैं। एकाएक कोई अज्ञात भारीस्वर ठहाका लगाता है और पूरे स्टेज पर धुआं फैल जाता है। नीचे बैठे साज बजाने वाले डर कर औंधे गिर पड़ते हैं। धीरे धीरे धुआं छंटने लगता है और खेल शुरू होता है। दर्शक बेशुमार हैं और टिकटघर पर बर्फ बरस रही है। बुकिंग क्लर्क थरथर कांप रहा है।

मध्यस्तरीय किराना-भण्डार।

चावल दाल आटा मसाले नमक, अचार, पापड़ स्नो क्रीम, पाउडर, साबुन कंघा सोडा झाड़ू टॉफी चॉकलेट बिस्कुट, घी तेल, चीनी मैदा रंग, चाय कॉफी बैटरी स्टोव-पिन—सब कुछ यथास्थान क़ायदे से रखा हुआ।

और यह रहा कथानक का एक हिस्सा।

ग्यारहवर्षीया पूर्वी स्कूल में है। टिफिन की छुट्टी हो चुकी है। कक्षा की और जानी-पहचानी लड़कियां नाश्ता करने लगी हैं। पूर्वी के होंठ

सूखे हैं। पेट जैसे पीठ से चिपका जा रहा है। वह घटी वजते ही वर्ग मे निकलती है और अहाते की पश्चिम वाली दीवार की ओर तेजी से भागती है। वायें हाथ मे सिर्फ लकडी की एक स्केल है। उत्तर की ओर वरामदे पर वहुत सारी लडकिया अपना-अपना टिफिन वॉक्स खोल चुकी हैं। आपस मे एक-दूसरे को पूडिया, पराठे-कचौडिया, सूखी सब्जी दे-देकर खाने लगी हैं। कोई मुस्कराती है, कोई खिलखिलाती है, कोई अपना कुरता सभालती है, तो कोई दुपट्टा। पूर्वी चुपचाप दीवार से सटी खडी है। वह इधर नही देखती। वह यो ही, शायद निरर्थक ही, उचक-उचक कर दीवार के उस पार खडे ताडवृक्षो को देखती है। फिर स्केल से अपनी वायी हथेली को ठोकने लगती है। हल्की गुलावी, कोमल, प्यारी हथेली।

मामूली छीट की फ्रॉक, लट्ठे की सलवार, पैरो मे हवाई चप्पल। चप्पल का दाहिने पाव का फीता उखड गया है। उस फीते को उसने शायद ो आलपिनो से फसा रखा है। दिवाकर मलिक की वेटी है न। लगता है, उनका ही सौन्दर्य लेकर धरती पर आई है। वैसा ही मनोहर रूप, वैसा ही नयनाभिराम मुखडा। एक पतली-सी चोटी पीठ पर झूम रही है।

उत्तर के वरामदे मे दो लडकियो के साथ नाश्ता करती हुई मीना की नजर उस पर पडती है। मुह से फूट पडता है, "हाय ! पूर्वी उधर चुप-चाप खडी है।"

दूसरी लडकी कहती है, "उसे वुला लो।"

मीना पुकारती है, "अरी पूर्वी, वहा क्या कर रही है ? इधर आ, इधर। पूर्वी, ओ पूर्वी !"

पूर्वी शायद सुन नही पाती। उसकी गर्दन जरा हिलती है और वह फिर उचक-उचक कर ताडवृक्षो को देखने लगती है।

तीसरी लडकी मीना को टोकती है, "छोडो, वन रही है। दिवाकर मलिक की वेटी है न 'कत्थक नाच ••।"

दूसरी लडकी कहती है, "दिवाकर मलिक का वडा नाम है। एक वात तुम नही जानती न ? पूर्वी भी वायलिन वजाती है।"

तीसरी लडकी हलवे के साथ आधी कचौडी मुह मे डालती हुई कहती

है 'बजाती होगी। यही तो धन्धा है इन लोगों का।"

पूरे अहाते में लड़कियां आ-जा रही हैं। वातावरण जैसे गूंज रहा है। स्टाफ रूम में शिक्षिकाएं जलपान कर रही हैं। वहां भी हंसी है, खिलखिलाहट है, साड़ियों की सरसराहट है।

उधर ताड़वृक्षों पर तीन-चार कौए आकर अलग-अलग बैठ जाते हैं। पूर्वी उन्हें भी निहारने लगती है। पहले एक कौआ अपने पंख फड़फड़ाता है फिर दूसरा और तीसरा-चौथा। दूसरा कौआ अपनी चोंच से अपने बायें पैर को खुजलाने लगता है। फिर सिर उठाकर पूर्वी की ओर देखता है—कहीं इस लड़की के हाथ में ढेला तो नहीं है? उसकी शंका का समाधान नहीं होता और वह उड़कर भागता चला जाता है, भागता चला जाता है।

घण्टी टनटना उठती है। लड़कियां कक्षाओं की ओर भागती हैं। पूर्वी भी धीरे-धीरे चलती हुई वर्ग में आकर अपनी जगह पर आ बैठती है।

5

दस्तक! वार-वार दस्तक!!

दिवाकर मलिक की वैठक के द्वार पर दस्तक!!!

न जाने किस ज़माने मे यह सोफासेट यहीं पडा है। उस ओर मध्यम आकार की एक चारपाई के वीच मे काफी जगह वच जाती है। दरवाज़ा दक्षिण की ओर खुलता है। दीवार पर देवी-देवताओ के चित्र टगे हैं। वाकी सव कुछ साफ-सुथरा है। विजली का मेन मीटर वैठक मे है—दरवाज़े से सटा वायी ओर—फर्श से लगभग सात फुट ऊपर। उस पर धूल जम गई है और मकडी ने अच्छे-खासे जाल वना रखे हैं। इस वैठक मे पश्चिम की ओर एक दरवाजा खुलता है, जिससे भीतर आगन मे आया-जाया जाता है। सोफासेट इसी दरवाज़े से उत्तर-दक्षिण दिशा मे लगा है। अतिथि आते हैं, तो वे अक्सर इसी सोफे पर विठाए जाते हैं। उनका चेहरा पूर्व की ओर होता है और वे शरारतन झाकना चाहें, तभी आगन मे झाक सकते हैं, अन्यथा आगन मे फुदकती गौरैया तक उन्हें नज़र नही आ सकती।

सोफे पर लगे सारे कुशन न जाने कव इस लायक हो गए कि डस्ट-विन के हवाले करना पडा। अव कुशन की जगह उनकी नाप की दरी काट-काटकर विछी है। पूरव की ओर दीवार से सटी एक छोटी-सी मेज़ है, जिस पर न तो ऐशट्रे है और न कोई गुलदस्ता। हा, एक चीज़ ज़रूर हमेशा देखी जाती है—शुभ्र पाषाण के मुरलीधारी वालकृष्ण। यह छवि वेहद प्यारी, न्यारी, मनोहारी है।

दमयन्ती या पूर्वी इस वैठक को फूलझाडू से रोज़ दो वार वुहारती हैं। पहले यह काम कल्याणी और वागेश्वरी के ज़िम्मे था। वैठक सदा स्वच्छ-सुहानी वनी रहती है। पूर्वी प्रत्येक प्रात-सन्ध्या वालकृष्ण की मूर्ति के सामने एक जलती हुई सुगन्धित धूपवत्ती जलाकर खोस जाती है। पूरी

बैठक सुगन्धायमान हो जाती है। बैठ जाने का जी करता है गहरी सांस भरने का मन करता है।

द्वार खुल गया।

सिर के आँचल को और भी व्यवस्थित करते हुए दमयन्ती ने कहा "आइए।

आगन्तुक ने चौखट के पास पाँव डालते हुए कहा "नमस्ते। मेरा नाम मनोहरलाल है।

"अच्छा ।" ठंडा-सा स्वर दमयन्ती का।

"दिवाकर मलिक है घर में ? मनोहरलाल ने खड़े-खड़े पूछा और दमयन्ती की रूपराशि को देखकर चकित रह गया।

सूखते हुए गुलाब में इतनी सुगन्ध ?

तारे चन्द्रमा से छोटे नजर आते हैं मगर कहते हैं उनका आकार चन्द्रमा से कई गुना अधिक होता है। मामूली-सी सफेद साड़ी साड़ी की हल्की गुलाबी किनारी। गोरी-गोरी कलाइयों में काली-काली नहीं लाल लाल चूड़ियाँ। पर, इससे क्या ? लाल मनिया आखिर लाल मुनिया है।

मनोहरलाल अपने मन में उठते हुए विकार से लड़ने लगता है कि दमयन्ती आँगन की ओर खुलने वाले दरवाजे की ओर खिसकती हुई बोली "बैठ जाइए, खड़े क्यों हैं ?

मनोहरलाल जैसे ससंकोच बैठ गया।

दमयन्ती ने पूछा 'आप कहाँ से आ रहे हैं ?'

"मीना बाजार से।

'मीना बाजार से ?'

'जी हाँ।

"क्या काम है मलिक जी से ?"

मनोहरलाल ने जैसे बड़ी जल्दी में कहा "दिवाकर मलिक मुझे जानते हैं। मीना बाजार में मेरी दो-दो दुकानें हैं।"

"दो-दो दुकानें ?"

"जी हाँ। एक कपड़े-साड़ियों की और दूसरी ज्वेलरी की। मगर मैं कपड़े वाली गद्दी पर ही बैठता हूँ। ज्वेलरी वाली गद्दी पर बड़े भाई साहब

बैठते हैं। दिवाकर जी उधर से गुज़रते हैं, तो बराबर 'जय रामजी की' होती है।"

चबूतरेवाले कमरे मे चुपचाप लेटे हुए दिवाकर मलिक की आखें खुली हुई हैं। परेशान आखें जैसे नीद से झगड रही हैं। दिवाकर मलिक ने कान अडा कर सुन लिया है कि यह आवाज़ मनोहरलाल की ही है। सम्पर्क, मैत्री और उन नगण्य स्थितियो की स्मृतिया मानसपटल पर उभरने लगी हैं, जिनमे दोनो ने एक-दूसरे को 'जय रामजी की' है।

"अच्छा, अच्छा।"

मनोहरलाल ने कहा, "आपको मालूम ही होगा कि शहर के इस इलाके मे न तो एक पार्क है, न बगीचा और न तालाब। हम लोगो ने सरकार के यहा दरख्वास्त लगाकर एक शानदार तालाब खुदवा लिया। बगल मे एक पार्क भी बन कर तैयार हो चुका है। बीच मे खुला हुआ स्थान और चारो ओर रगबिरगे फूलो की क्यारिया। क्या बतलाऊ आपसे, तालाब के नीचे से एक नम्बर का पानी निकला है। आज बीच मे लाट भी गड गया। तीन ओर घाट बन चुके हैं। एक ओर का बाकी है। हम लोगो ने तय कर लिया है कि तालाब और पार्क की सफाई मे कोई कमी न रहने पावे। समिति के एक मेम्बर ने चाहा था कि एक घाट धोबियो के लिए छोड दिया जाए, मगर मैंने कहा ऐसा नही हो सकता। तालाब के किसी घाट पर धोबी क्या, धोबी का गदहा तक नही नज़र आना चाहिए। अब खुशी की बात यह है कि मिनिस्टर साहब तालाब का उद्-घाटन करने को तैयार हो गए हैं। आज मगलवार है न ··?"

"जी।"

"उद्घाटन शुक्रवार को होना तय हुआ है।"

"तालाब की पूजा भी तो होगी न ?" दमयन्ती ने सहज भाव मे पूछा।

"जी हा, पूजा तो होगी ही। मिनिस्टर साहब खादी की जाघिया पहन कर तालाब मे छलाग लगावेंगे।" मनोहरलाल ने बतलाया।

दमयन्ती के मुह से निकला, "भाई साहब, तब तो आपको शहर के किसी अच्छे तैराक से उद्घाटन कराना चाहिए।"

मनोहरलाल ने असहमतिसूचक सिर हिलाते हुए कहा, "तैराक गहरे पानी में तैर सकता है फल्क तो नहीं दे सकता न।"

'अच्छा अच्छा' आप इनको किसलिए तलाश रहे हैं ?

'हमने शुक्रवार की रात पार्क में एक वृहद् सांस्कृतिक प्रदर्शन का आयोजन किया है। वैसे तो और भी कई आर्टिस्ट हैं मगर दिवाकर जी के मुकाबले का डांसर कोई नहीं है। इनके दो नृत्य पूरे समारोह के लिए बहार बन जाएंगे। मिनिस्टर साहब भी याद करेंगे कि किसी फंक्शन में जाने का मौका मिला था। क्या व्यापारी और क्या नौकरी पेशे वाले सभी इस बात पर एकमत हैं कि दिवाकर जी ।"

दमयन्ती ने एकाएक पूछ लिया "ठीक है इसके लिए आप लोगों ने इन्हें कितना देने का विचार किया है ?

चौहरी और बजाज—मनोहरलाल की नस-नस में जैसे आश्चर्य की लहर दौड़ पड़ी। दमयन्ती के इस प्रश्न ने जैसे उसे आहत कर दिया फिर भी उसने अपने को नियंत्रित करते हुए कहा आपने तो गजब का सवाल कर दिया मुझसे। दिवाकर जी होते तो शायद बुरा भी मान जाते। यह तो समाज की सेवा है। इसमें लेनदेन का मामला कहां आता है ? क्या आप *उस तालाब में स्नान नहीं करेंगी क्या घर की चाहरदीवारी से* आपका मन ऊबेगा तो आप उस पार्क में आकर नहीं बैठेंगी ?"

दमयन्ती ने कहा "यहां से काफी दूर पड़ता है वह तालाब और वह पार्क।

'खैर, कभी आइएगा। मैं कल निमन्त्रणपत्र भी भिजवा दूंगा। पार्क को तो हम लोग ऐसा सजाएंगे कि वह इन्द्र भगवान का बगीचा बन जाएगा। मनोहरलाल कहता रहा, 'आप तो खुद एक महान और मशहूर आर्टिस्ट की 'वो' हैं। इसलिए आपको यह नहीं बतलाना होगा कि कलाकार पैसे को पांव की धूल समझता है। और पैसों से भला किसी कलाकार का सम्मान किया जा सकता है ? "

ये शब्द जब कानों में पड़े तो दिवाकर मलिक की आत्मा जैसे चीख उठी 'ठीक कह रहे हो मनोहरलाल। कलाकारों के गले में सिर्फ मालाएं डालनी चाहिएं। एक-दो नहीं दर्जन दो दर्जन पचास सौ। यानी

इतनी मालाए, कीमत कम हो तो बेहिसाब, कि उनकी गर्दन टूट जाए। जिन्दा ही उन्हे प्रेत बना दो। प्रेतों को न तो मकान चाहिए न कपडे, न खाना, न दवाए प्रेत लावल्द होते है न। इसलिए उन्हें बाल-बच्चो की माया भी नही सताती, फिर वे किसका भविष्य बनाने के लिए कुछ जोड़ना-बटोरना चाहेंगे ?'

दमयन्ती का स्वर धीमा पड गया। बोली, "मेरी समझ मे एक बात नहीं आती कि समाज कैसे यह सोच लेता है कि सिर्फ सौ-पचास लोगो की भीड जमा करके कलाकार के गुणों का बखान कर देने-भर से उनकी सारी समस्याओ का हल निकल जाएगा ? आखिर कलाकार भी तो समाज के बीच का ही एक इन्सान होता है। मेरे घर मे पन्द्रह-बीस दुपट्टे पडे है। वे स्वागत समारोहो मे इनके कधे पर डाले गये थे। क्या आप उन दुपट्टो के बदले एक हजार रुपये दे सकते है ? कहिए, तो मैं निकाल लाऊ। हजार रुपये मे मेरी कई समस्याए हल हो जाएगी।"

मनोहरलाल बडे पसोपश मे पडा। उसने सोचा, औरतो से जबान लडाना ठीक नही। बोला, "यह काम तो किसी फुर्सत के समय किया जा सकता है। देखना होगा कि दुपट्टे सचमुच सिल्क के हैं या टसर के। वैसे भागलपुरी रेशम के कपडे के भी अच्छे होते हैं। अभी तो मैं जल्दी मे हू। आप कृपा कर मुझे उनसे मिलवा दीजिए।"

"वह तो घर मे नही हैं।"

"नही है ?"

"ना।"

"आपने पहले क्यो नही बतलाया ?"

"हम लोग दूसरी-दूसरी बातें करने लगे न।"

मनोहरलाल उठ खडा हुआ और बोला,"वैसे आए तो कह दीजिएगा। मुझे अच्छी तरह जानते हैं। मैं कई बार उनके काम आ चुका हू। एक बार बाजार मे रुई गायब हो गई थी। दिवाकर जी बडे परेशान थे। आरती की बत्ती बनाने के लिए उन्हें थोडी रुई चाहिए थी। मैं खुद उनके साथ मागीलाल के पास गया। मेरे कहने पर मागीलाल ने सौ ग्राम रुई दे दी थी। पैसे अपने पास से यह देने लगे। मैंने रोक दिया। फिर तो मागीलाल

को भी लिहाज हो आया।

दमयन्ती चुपचाप सुनती रहीं।

उधर चबूतरे पर लेटे हुए दिवाकर मलिक ने भी यह बात सुनी।

मनोहरलाल एक कलाकार के प्रति बरती गई अपनी उदारता का एक और सच्चा किस्सा कहता रहा "बहुत साल गुजर गए। दिवाकर बाबू मीनाबाजार की सड़क पर चक्कर लगा रहे थे। गर्मियों के दिन थे और सवा बारह बज रहे होंगे। मैं अपनी गद्दी पर था। नजर मिली तो मैंने फौरन बुला लिया। वह परेशान नजर आए। एक ओर कोने में ले जाकर पूछा तो मालूम हुआ कि एक कर्णफूल पर पचास रुपए उधार चाहते हैं। मुहल्ले में लाज के मारे किसी से कहते नहीं बन रहा है। मैंने समझाया—'महाराज गिरवी रखी हुई चीज मुश्किल से कोई छुड़ा पाता है। पचास रुपए में सोने का कर्णफूल हाथ से निकल जाएगा। इसे बेच ही डालिए। मेरी बात मान गए। मैं अपने भाई साहब के पास लिवा ले गया। मैंने एक सौ छियालीस रुपए में किसी तरह करा दिया। दूसरा दुकानदार मेरे खयाल से एक सौ तीस से एक छदाम ज्यादा नहीं देता।

दमयन्ती ने कुछ स्मरण करते हुए कहा "जी हां अब याद आ रहा है। घर लौट कर आए, तो कहने लगे कि मीनाबाजार में बड़ी देर तक चक्कर-पर-चक्कर लगाता रहा। साहस ही न हो कि किसी दुकान में घुसूं। एक मित्र मिल गए। उन्होंने ही अपने भाई के हाथ कर्णफूल बिकवा दिया।

"जी हां वह सेवक मैं ही हूं मनोहरलाल।

'आपका अहसान भूलते नहीं थे।

"क्या अब भूल चुके हैं?

"मुझे तो ऐसा ही कुछ लगता है।"

"नहीं नहीं ऐसी बात नहीं। कलाकार इतने अकृतज्ञ नहीं होते।"

दमयन्ती बोल पड़ीं "हां यह तो ।"

मनोहरलाल को लगा जैसे दमयन्ती ने व्यंग्य कसा हो। पूछा "क्या आप कुछ और कहना चाहती हैं क्या?

"जी नहीं और कुछ नहीं।'

मनोहरलाल ने अपने कदम चौखट से वाहर करते हुए कहा, "अव चलता हू। जरा कह जरूर दीजिएगा। वैसे छपा हुआ निमन्त्रणपत्र जरूर आवेगा। क्या कहू, स्टेज पर आगे की सीटो पर सिर्फ अफसरो और उनकी वीवियो के वैठने का ही इन्तजाम हो सका है। आप भी चाहें, तो आ सकती हैं। दायी ओर दरी पर महिलाओ के वैठने का प्रवन्ध है। आपको हम वही विठा देंगे। अच्छा, नमस्ते। जरूर-से-जरूर कह दीजिएगा। यह समाज की इज्जत का सवाल है • ।"

दमयन्ती ने इस वार कुछ नही कहा। चुपचाप आगे वढकर दरवाजा वन्द कर दिया। चवूतरे पर लेटे हुए दिवाकर मलिक ने मनोहरलाल की आखिरी वातें सुन ली थी। वह जैसे फुसफुसा पडे, 'कलाकार तो समाज की इज्जत वचाये और समाज कलाकार को निर्जीव खिलौना समझे • ।'

6

अतीत के अनगिन परस्पर असम्बद्ध चित्र दिवाकर मलिक के दृष्टि सरोवर में तैर रहे हैं। पर न अन्न का एक दाना नहीं। समझ में नहीं आता कि किसके पास जाएं, कहां से कुछ लाएं। फिर सुस्ती आती है। सुस्ती आधी नींद का रूप धारण करती है और लाइट ऑन-ऑफ होने लगती है। हाय कितना कुछ खोकर कोई कला का लाड़ला-दुलारा बन पाता है! कभी पड़ोस के लालाजी ने इसी दरवाजे पर हांक लगाकर कहा था "सुन लो दीदी दिवाकर मेरी बात पर ध्यान नहीं दे रहा है। हम-तुम तो पके हुए फल ठहरे, जाने कब डाली से टपक पड़ें। मगर, तुम्हारा यह छोकरा जो बालकृष्ण बना फिरता है कहीं का न रहेगा। अब बायस्कोप आ गया है। उसमें दूसरे प्रकार के नाच होते हैं और लोग उन्हें ही पसन्द करते हैं। अब नाच पर जो भगवान के बोल बोले जाते हैं उनका आनन्द लेने वाला ढूंढे न मिलेगा।

वृद्धा श्यामा ने दरवाजा खोल दिया था और घूंघट की ओट से कहा था 'बैठिए, लाला भैया!

और उधर पीछे के कमरे में किशोर दिवाकर मन-ही-मन कुछ याद कर रहे थे कुछ बुदबुदा रहे थे रट रहे थे। पांवों में जैसे थिरकन सिमटी चली आ रही थी

स्थायी

'ता थेई, ता थेई तत आ थेई ता थेई तत।
धिन ना धिन धिन ना तिन ना धिन धिन ना।

अन्तरा

'ता थेई ता थेई तत एक-दो-तीन एक-ता थेई थेई तत।
धिन ना धिन धिन ना तेटेकतकिन तेटे धिन धिन ना।
एक बायां पैर, दो बायां पैर।

दिवाकर घुंघरू बांध लेते हैं, फर्श पर उतर जाते हैं, फिर

'ता थेई, ता थेई तत · '

लाला ने जैसे श्यामा को एकदम मे दीन-दुनिया का दर्शन कराते हुए बतलाया, "हमारे देश मे तुम्हारी जाति के लोग लाखो साल पहले से जप-तप, यज्ञ, पूजा-पाठ करते-कराते आए हैं। इसमे भला किस बात की हेठी ? बगीचे वाले महन्त जी ने चेला बनाने की खबर भिजवायी थी, मगर तुम्हारे यहा से टाल दिया गया। तुमने तो सुना ही होगा कि उसके बाद महन्त जी पखवाड़े-भर भी न बचे और सुग्गन राय का लौडा चेला बनकर लाखो की जायदाद का मालिक बन गया। खैर, गया हुआ वक्त कब हाथ आता है ? परसो मे श्री लक्ष्मीनारायण मन्दिर के पुजारी भगवान के यहा जाने की तैयारी कर रहे हैं। मुझसे इशारा कर कहा कि दिवाकर को बुला दो, उसे अपना स्थान सौंप दू। सो यह अन्तिम अवसर है। जानती हो, मन्दिर के नाम पर बाईस बीघा खेत है और मन्दिर मे भला क्या खर्च है ? चढावे ही इतने चढते हैं कि मत पूछो। मेरा विचार है कि दिवाकर नहा-धोकर चले ओर पाच लोगो के सामने उनसे तिलक करा ले। मन्दिर की देख-रेख मे भला क्या रखा है ? भक्तजन आते हैं और सारी सफाई कर जाते हैं। घण्टी डुलाने-भर से ही पेट भर जाए, तो काया डोलाने की क्या जरूरत ? दिवाकर घर मे है कि नही ?"

"अभी था तो ।"

लाला बोले, "छोडो, मेरे सामने तो पढाये-सिखलाये हुए तोते की तरह 'हा हा' करेगा और जहा मैंने उस ओर पीठ फेरी कि 'ता थेई तक थेई' के वश मे आ जाएगा। तुम उसको समझाना। अभी बच्चा है, बात मान सकता है। कच्चे घडे को तोडकर छोटा-बडा बनाया जा सकता है। पक जाने पर तो एक ककडी तक की चोट नही सह सकता। मेरे दादा कहा करते थे—पढो बेटा चण्डिका, जिसमे चढे हण्डिका। हम तो बनिया ठहरे। बचपन से ही डाडी मारना हमने न सीखा होता, तो आज जो कुछ देख रही हो, वह सब नही होता। गाना-बजाना और नाचना रोज़-रोज़ रोटी देने वाला इल्म नही है हा। तुम मा ठहरी उसकी। समझाओ। और जो राज़ी हो जाए, तो कहना मामू के पास चले जाओ। मैं सारा अनुष्ठान शाम तक पूरा करा दूगा। तुम तो कई बार उस मन्दिर मे हो

आई हो। पूजा-पाठ के लिए कहीं दूर तक खोजने नहीं जाना पड़ता। मन्दिर के अहाते में ही पिछवाड़े की ओर फुलवाड़ी है। हद यह कि कपास के भी तीन पौधे हैं। रोज उनमें सब कोये फटते हैं और रूई-सी कपास उनसे निकलती है। कोई भक्त घी दे जाता है कोई भक्त दूध दे जाता है।"

मगर सेट किया हुआ पासा जैसे मौके पर धोखा दे गया। दिवाकर इस राग-रंग के झंझट से मुक्ति पाने के लिए मृत्यु के परवाना के द्वार बुहारते रहे और छह साल बाद लौटे। श्यामा सूख कर आधी हो गई। वैसे आधी भी न बचती अगर दिवाकर पत्र न भेजते रहते। पेट से बड़ा चाण्डाल तो कब्रिस्तान का कब्रखोदा तक नहीं होता। श्यामा एक वक्त पकाती और दोनों वक्त खाती। घर की रही-सही थोड़ी नकद पूंजी भी जाती रही। शाम को दरवाजे से बाहर निकलकर खड़ी होती और उम्मीद करती कि किसी ओर से दिवाकर आ निकलेगा। लेकिन यह मन तो बड़े-बड़े ज्ञानियों को छल लेता है साधारण लोग यदि इससे छले जाते हैं तो भला क्या आश्चर्य ?

7

सैंकडो मीटर फिल्म जैसे देखते-देखते खिसक जाती है।

पत्नी-रूप दमयन्ती आती है। दो साल वाद मा वनती है। इसके पन्द्रह दिन पहले दिवाकर कलकत्ता से लौटे थे। सात सौ रुपये ले आए थे। जिसने इनका नृत्य देखा, मुग्ध हो गया। सोनार देश वगाल की नर्तकिया चकित रह गईं। दिवाकर जैसे समारोह के हीरो वन गए।

कन्या ने जन्म लिया, तो माना गया कि घर मे लक्ष्मी आई है। इस लिए छोटा-सा वढिया नाम रखा गया—कल्याणी। और एक और रील जव घूम गई, तो पता लगा कि कल्याणी की उम्र वीस साल हो गई। इसके अलावा वागेश्वरी और पूर्वी।

कहा चले गए वे दिन ?

जा रे जमाने, तू कितना वदल गया !

सुग्गन राय का लडका महती के साथ-साथ पाच-पाच रखैलो को भी सभाल रहा है। सम्पत्ति मे फुलावट आ गई। महाजनी का कारोवार भी चलता है। चार-चार मुशी खाते सभालते हैं। एक कारिन्दा कचहरी मे चक्कर लगाता रहता है। नाज़िर से मिलकर वही जब्ती-कुर्की का कागज तैयार करवाता है। धर्म के लम्वे-चौडे मैदान मे अधर्म चौका-छक्का लगाता है। सुग्गन राय का लडका वरावर सिर मुडाये रहता है और गेरुए रग का कुरता पहनता है तथा साफा वाधता है। लक्ष्मीनारायण मन्दिर के पुजारी जी सचमुच मर गये और रामपूजन ने उनका स्थान ले लिया। वाईस वीघे की खेती वयालीस वीघे मे वदल गई। उसके लगातार तीन वेटे हुए। सवसे वडा मजदूरो की सहायता से खेती करता है और अनाज वेचकर नोटो की गड्डिया घर मे लाता है। दूसरा वाला मैट्रिक पास करके डिस्ट्रिक्ट कोर्ट मे किरानी वन गया है। पडोस की कुम्भकारपुत्री के इश्क़ मे फस गया, तो एक रात उसे उडाकर कही ले गया और मन्दिर मे शादी करके लौटा। तीसरा पुत्र पढता-लिखता नही। पूर्वी की उम्र का है।

नुक्कड़ पर हमेशा चाय की दुकान में मजार आता है। कभी-कभी लक्ष्मी नारायण के मन्दिर में ड्यूटी बजा देता है और जेबखर्च-भर आसामी से निकाल लेता है।

बाईस बीघे नहीं अमाव अब बयालीस बीघे।

रामपूजन पता नहीं भीतर-ही भीतर कुढ़ते हैं या नहीं मगर बाहर से बेटों के बारे में मौन रहा करते हैं। यदाकदा दिवाकर मलिक से भेंट हो जाया करती है। दमयन्ती के साथ मन्दिर में इधर कई बार कल्याणी को देखा है। एक बार दिवाकर मिल गए, तो पूछ लिया "बड़ी वाली के लिए कहीं टोह ले रहे हो?

दिवाकर बोले "हां मगर दहेज की रकम आड़े आती है। वह जमाना भी तो अब नहीं रहा जब कभी इस शहर, कभी उस शहर से बुलावे आया करते थे।

'तुम शुरू में ही गलती कर गए, दिवाकर!' रामपूजन ने समझाते हुए कहा 'मनापुर के बाबू साहब तुम्हें अपने यहां रखना चाहते थे। रह जाना चाहिए था। बंधा-बंधाया भोजन-वस्त्र और कुछ माहवार भी मिलता रहता। उनसे ही आज्ञा लेकर इधर-उधर का भी चक्कर लगा आते। कितने घुंघरू बांध डाले होंगे तुमने! मनकार से मला पैसे कहां झरते हैं मलिक?

"हां मैंने यह गलती की। दिवाकर मलिक ने बड़े बेमन से कहा।

रामपूजन से अलग होने पर दिवाकर मलिक को एक और बात याद आई। रट रटाकर मैट्रिक पास कर लेना चाहिए था। महिला कालेज के लेडी प्रिंसिपल की ओर से विज्ञापन निकला था—एक नृत्य प्रशिक्षक चाहिए। शैक्षणिक योग्यता कम-से-कम मैट्रिक पास।

मौका आते ही आदमी कैसा हो जाता है?

ऐसे कई अवसर आए थे, जब दिवाकर के नृत्य देखकर प्रिंसिपल श्रीमती जोशी आनन्द से अभिभूत हो गई थीं। रहा नहीं गया तो पास आकर उन्होंने कहा 'खूब! आप हम लोगों के लिए गौरवपुरुष हैं। हमारे 'उनको' भी संगीतकला से बहुत प्रेम है। कभी हमारे यहां पधारिये।"

"आऊगा, अवश्य आऊगा।"

"आइए, हमारा सौभाग्य होगा।"

किसी ने यह नौकरी पकड लेने की बात सुझायी, तो बडे खुश हुए। याद आया, श्रीमती जोशी उनकी प्रशसिका है। वह जानेंगी कि मैं यह पद चाहता हू, तो फौरन रख लेंगी। प्रार्थनापत्र टाइप करवाया और सोचा—पहले चलकर श्रीमती जोशी को दिखला लू। इण्टरव्यू के तो अभी पन्द्रह दिन शेष है।

शाम के लगभग छह बजे उनके घर पहुच गए। बायी जेब मे प्रार्थना-पत्र था। खबर देने पर एक नौकर ड्राइग रूम का दरवाजा खोल गया। बोला, "बैठिए, अभी आती हैं।"

प्रवेश कर कोने मे रखी हुई कुर्सी पर शान्त-सहज भाव मे बैठ गए थे। वे ही सदाबहार घुघराले बाल, गौर मुखमण्डल, आखें ऐसी, जैसे कमल का कोया आधा फटा हो। कोमल-कोमल हाथ, कोमल-कोमल पाव। पतले-पतले अधरो के पीछे धवल दतपक्तिया।

एक नृत्य का भाव जैसे आ खडा होता है।

कृष्ण पहले से यमुनातट पर कदम्ब की छाया मे खडे, वशी लिए राधा की प्रतीक्षा कर रहे हैं। जल भरने के लिए उधर मे राधा आ रही हैं। कृष्ण पर दृष्टि पडते ही रुक जाती हैं। आनन्द और लज्जा से आखें फैलती हैं, फिर पलकें झुक जाती हैं। समझ रही हैं कि कृष्ण ने उन्हें देखा नही। मन-ही-मन फैसला करती हैं, झाडी की ओट मे छिप जाना चाहिए। सिर से कलश को उतारकर कमर पर रखती हैं, फिर बाए हाथ से कृष्ण की ओर इशारा कर झाडी मे घुसने लगती हैं। पर, कृष्ण सारे खेल चुपके-चुपके देख गए। सिर यो हिला, जैसे कह रहे हो, मैंने देख लिया, कहा जाओगी मुझसे छिपकर?

दिवाकर कृष्णरूप धारण किए यह नृत्य प्रस्तुत कर रहे थे। सो, भावानुरुप मुस्कराए। धवल दतपक्तियो की शोभा दर्शको की आखो मे नही, दिलो मे समा गई।

हाय रे, दिवाकर मलिक!

सच बतलाना, राधा का नटवर नागर कोई और था, या स्वय

देखकर श्रीमती जोशी ने हृदय से [illegible] यही प्रश्न किया था। श्रीमती जोशी [illegible] गई थीं।

'आप तो चाय नहीं [illegible]।'

'जी, मैं चाय नहीं पीता। [illegible] कोई [illegible] नहीं।'

'कुछ मीठा [illegible] फिर [illegible]।'

अब दोनों ड्राइंग रूम में आमने-सामने थे। [illegible] एक जमाना था [illegible] थी। फाइनल इयर की परीक्षा [illegible]। और, जब ब्याह हुआ तो बच्चे भी हुए। [illegible] गई।

दो लड्डू और एक रसगुल्ला।

नौकर प्लेट उठा कर ले [illegible] श्रीमती जोशी [illegible] "साहब पर चल जाओ। [illegible] पीस पन [illegible] बर्फियाँ।

नौकर बोला [illegible] है।

इस बीच दिखाकर [illegible] और [illegible] जाती थी [illegible] था।"

"[illegible]"

[illegible]

[illegible]

[illegible] है [illegible]"

[illegible] है कि [illegible]।"

"क्या आपका अपना लडका है ?"

जैसे कलेजे पर पत्थर रखकर दिवाकर मलिक ने कहा, "जी नही, यह नौकरी मैं खुद करना चाहता हू ।"

श्रीमती जोशी को वडा आश्चर्य हुआ। वोली, "अरे, आप यह क्या कह रहे हैं ? यह नौकरी आप करेंगे ? आप इतने वडे कलाकार हैं। क्या कहेंगे लोग ? आपकी क्या कोई मामूली प्रतिष्ठा है ?"

दिवाकर मलिक ने कहा, "मैं सच कह रहा हू । मुझे यह नौकरी चाहिए। नौकरी आखिर आदमी ही करता है। लोग क्या कहेंगे, मैं इसे सुनने नहीं जाऊगा। तारीफ मे कुछ या ज्यादा कहना जवानी होता है, इसलिए लोग इसमे सकोच नही करते। आप मेरे लिए कर दीजिए। दो लडकिया व्याहने योग्य हो गई हैं।' वडी कृपा होगी आपकी' ।"

श्रीमती जोशी जैसे कुछ और सभल कर वैठ जाती हैं।

"आपने नृत्य की कौन-कौन-सी परीक्षाए पास की हैं ?"

"परीक्षा तो नही पास की।"

"तव कैसे काम चलेगा ?"

"मैंने जनता के सामने परीक्षाए दी हैं।" दिवाकर मलिक याद कर-कर के कहने लगे, "मुझे दो-दो वार राष्ट्रपति ने पुरस्कृत किया है। ग्वालियर के अखिल भारतीय सगीत सम्मेलन मे •।"

श्रीमती जोशी ने वीच में ही टोका। श्रद्धा का स्थान समता ने ले लिया। वोली, "भाईजान, सव ठीक है। आपको पुरस्कार मे कुछ रुपये मिले होंगे, शाल मिली होगी, तावे की पट्टिका पर खुदे हुए कुछ अक्षर मिले होंगे। आपको माला भी पहनायी गई होगी। मगर, राष्ट्रपति जी ने आपसे यह कभी नहीं पूछा होगा कि आप किन समस्याओ मे घिरे हुए हैं। आपके लिए वतलाइए, क्या किया जाए ?"

"जी हा जी हा ऐसा कुछ नही पूछा गया।"

"तो फिर ?"

दिवाकर मलिक वोले, "मेरा मतलव यह है कि मैं जिन वच्चियो को नृत्य सिखलाऊगा, वे सीख-पढ कर आखिर अपने नृत्य-प्रदर्शन जनता के सामने ही तो करेंगी ?"

"भाईजान आप बेहद मासूम जान पड़ते हैं। वे लड़कियाँ नृत्य का प्रशिक्षण लेने के बाद क्या करेंगी इससे मुझे क्या वास्ता? कालेज में लड़कियों के लिए एक नृत्य-प्रशिक्षण विभाग है और उसका प्रशासन मेरे हाथ में है। प्रशासन के लिए मुझे जो अधिकार और निर्देश मिले हैं उनसे न तो मैं एक इंच बायें खिसक सकती हूं और न दायें। कहते हुए श्रीमती जोशी ने पूछ लिया "आपने कहां तक शिक्षा पायी है?

दिवाकर मलिक ने उत्तर दिया "मैट्रिक का इम्तिहान दो बार दिया मगर दोनों बार फेल हुआ। मेरा मन तो नृत्य के बोलों में खोया रहता था। मैंने सोचा मुझे तो नर्तक बनना है कर्नाटक की लड़ाई कितनी बार हुई और हैदराबाद के निजाम आसफजाह के मरने के बाद वहां कौन तख्तनशीं हुआ इसे रटने से भला क्या होगा? आगे चल कर जो बनना है मैंने सारी शक्ति उसी में लगाना ठीक समझा। दिवाकर मलिक बड़े भोलेपन से कहते गए, "मैं जिस विषय से नफरत करता था उसे पढ़ने और याद करने के लिए मुझे विवश होना पड़ता था। मसलन—भूगोल को ही ले लीजिए। सोना कहां-कहां पाया जाता है? यदि मैं ठीक-ठीक यह बात जान भी लूं तो मेरी नृत्यकला को इससे भला कौन-सा लाभ मिल जाएगा? अब देखिए न जो छात्र मशीनों के तोड़ने-जोड़ने में रुचि लेता है उसे संस्कृत के धातुरूप रटाने से क्या होगा? उसे तो सरकार को चाहिए कि ।

मैं तो एक ही बात मानती हूं और वह यह कि सरकार कभी कोई गलती नहीं करती। इतने बड़े देश को चलाती है यह कोई हंसी-खेल तो है नहीं। देखिए, विज्ञापन में साफ कहा गया है कि आवेदक की योग्यता कम-से-कम मैट्रिक पास होनी चाहिए और आप मैट्रिक पास हैं नहीं। इसलिए आपके आवेदनपत्र पर विचार भी नहीं किया जा सकता।" श्रीमती जोशी ने स्थिति को दोटूक कर दिया।

दिवाकर मलिक जेब में रखा हुआ अपना आवेदनपत्र रखे ही रह गए। लेकिन एक बार फिर साहस करके बोले "नृत्य के क्षेत्र में मेरी साधना तीस साल की है। इतनी मेहनत इतनी लगन से तो आदमी चार विषयों में एम० ए० कर सकता है।

श्रीमती जोशी मुस्करा पडी। बोली, "और मजे की बात यह है कि आप मैट्रिक भी पास नही कर सके। आप एम० ए० पास को नृत्य सिखला सकते है, मगर आफिसो मे तो आप किरानी भी नही हो सकते। बहरहाल, मुझे अफसोस है कि इस मामले मे मैं आपकी कोई मदद नही कर सकती।" फिर उन्होंने सुझाया, "आप चाहें तो टाइपराईटिंग सीख लीजिए और एक मशीन लेकर कचहरी मे बैठ जाइए। भगवान चाहेगा, तो दिन-भर मे रोज पन्द्रह-बीस रुपए मिल जाएगे। इसका एक तरीका भी है। किसी चलते-पुर्जे वकील के सम्पर्क मे रहिए। ये लोग रोज ही दस-बीस अर्जिया लिखते-लिखवाते हैं। सारी अर्जिया आपको ही टाइप करने के लिए दिया करेंगे।"

"अच्छा ··।" बोलते हुए दिवाकर मलिक को जैसे पसीना छूटने लगा।

बेचारे आत्मग्लानि से भर आए। उठ पडे। श्रीमती जोशी ने कहा, "बैठिए, नौकर पान ला रहा होगा।"

"फिर कभी·· फिर कभी···।" कहते हुए हाथ जोड कर दिवाकर मलिक ड्राइग रूम से बाहर निकले। बदले मे श्रीमती जोशी ने हाथ नही जोडे। सिर्फ 'नमस्ते' कह दिया। विदा करने के लिए फाटक तक नही आई। ड्राइग रूम से एक दरवाजा भीतर की ओर खुलता था, उसी से चुपचाप भीतर चली गई।

कृष्ण नौकरी के लिए आया था और उस नौकरी के लिए अपेक्षित योग्यताओ मे से मुख्य योग्यता यही नही थी कि वह मैट्रिक पास हो। राधा बदल गई, जो एक बार मन-ही-मन क्षण-भर के लिए इस कृष्ण को मच पर मुस्कराते देख कर राधा बन गई थी।

बत्तियो से शहर की सडक चकाचौंध थी। अगल-बगल की दुकाने चमक रही थी। लोग आ-जा रहे थे। साइकिल, टमटम, स्कूटर और मोटर-गाडियो की रेलपेल मची थी। इतनी बडी दुनिया मे दिवाकर मलिक देख रहे थे कि उनका स्थान कहा है? मुल्क के भूगोल मे भला यह कहा पढाया गया था कि हमारे मुल्क मे फला कलाकार फला शहर मे पाया

जाता है। थानेदार को मालूम रहता है कि उसके इलाके में कौन गुण्डा कहां रहता है। किस स्थिति में रहता है। गुण्डों अपराधकर्मियों की समस्त स्थितियों से यह प्रशासन तन्त्र अवगत रहता है। मगर कला और संस्कृति में चौकीदारों की कोई भी सूची इस मुल्क के भूगोल में नहीं छापी जाती।

बहुत थकावट का अनुभव हो रहा था। थक कर एक चाय की मामूली दुकान में जा बैठे। दुकानदार के नौकर ने पूछा "क्या दूं?"

"चाय।

"चाय के साथ कुछ और?

"नहीं सिर्फ चाय। बोले। यह चाय अनिच्छापूर्वक पीनी थी।

बैठे, तो बैठ गए। आंखों के सामने एक विशाल महल उभर आया। इसी महल में जनतन्त्र का पहरेदार रहता है—सबसे बड़ा पहरेदार। मगर, साधारण जनता इस महल के अहाते में कदम रखने का साहस नहीं करती। इस महल में एक ऐसा शीशा जड़ा गया है, जो सकल मुल्क की वास्तविक तस्वीर को ढक देता है। यहां की रौनक पूरे मुल्क का मेयार नहीं है। इस शहर की सड़कें जहां यह महल है, पूरे मुल्क की सड़कों से अलग पहचान रखती हैं। इन सड़कों पर न तो गम भरे मौसम [illegible] जाते हैं और न कोई बालक या बुजुर्ग ही [illegible] मां-बाप का [illegible] बनने पर विवश होता है, बस हुए मौसम के टुकड़े [illegible] जाते हैं। [illegible] मसिक या पुरस्कार में तीन-तीन ताम्रपत्र मिल चुके हैं। [illegible] बस में। एकाएक जैसे कस्सानी सामने आकर खड़ी है [illegible] जी मेरे हाथ क्या पीस कराव? "आखिर मैं भी जिन्दा [illegible] हूं।"

8

नाटक पूरे वेग मे चल रहा है। सारे-के-सारे दर्शक पहले की ही तरह आखो पर पट्टी लगाए हुए हैं। ये सभी शुद्ध कला के प्यासे हैं। लगता है, इनके होठ सूख रहे हैं। जीभ की सम्पूर्ण तरलता चुक गई है। अव होठो पर जीभ फिराने से कुछ नही हो रहा है।

परदे के पीछे से मशीन की आवाज़ सुनायी दे रही है। शायद उसके पहिये पूरे वेग मे नाच रहे है। मौसम ठण्डा है या गर्म, इससे पहियो को कोई मतलव नही। उन्हें कौन चला रहा है, उन्हें इसका भी ज्ञान नही। वे सिर्फ यह अनुभव कर रहे हैं कि जिस धुरी से वे लगे हुए हैं, उसमे कोई तेल डाल जाता है। तेल न पड़े, तो धुरी घिस जाए और पहिये दाए-वाए जाकर लुढक पड़ें।

इधर छोटा-सा दफ्तर।

उधर प्रेस का मशीन रूम।

वीच मे दीवार है। इस दफ्तर से सीधे प्रेस के मशीन रूम मे जाया जा सकता है। दीवार के वीच मे एक दरवाज़ा है, जो मशीन रूम मे जाने-आने देता है। दफ्तर की लम्बाई पूरव से पश्चिम की ओर है। पूरव की ओर मालिक वैठता है, पश्चिम की ओर प्रेस का प्रूफरीडर। दाए-वाए जो जगह है, वहा कागज़ की रिमे रखी हुई हैं। मालिक की मेज़ पर फोन है, मेजपोश पर रगविरगे फूल-पत्ते छपे हुए हैं। मेज़ के तीनो ओर दो-दो अतिरिक्त कुर्सिया रखी हुई हैं। दोस्त आते है, ठहाके लगाते हैं। ग्राहक आते है, कुछ छपवाने और छपाई-दर की वातें करते हैं।

शाम के चार वज रहे हैं। छत से लटकता हुआ पखा तीन-चौथाई हवा मालिक को और एक-चौथाई हवा प्रूफरीडर को देता है। उसकी फिटिंग ही ऐसे स्थान पर की गई है।

चारुचन्द्र।

अवस्था पचहत्तर वर्ष। व्रजभाषा मे तीन खण्डकाव्य, खडी वोली मे

एक प्रबन्ध-काव्य और चार-पाँच उपन्यास लिख चुके हैं। एक ज़माना था जब चारुचन्द्र कवि-सम्मेलनों की शोभा होते थे। और भी लिखते मगर पत्नी थी बच्चे थे, नौकरी करनी पड़ी। मैट्रिक पास तो थे परन्तु किरानी होना पसन्द नहीं था। गजेटेड अफसर हो नहीं सकते थे क्योंकि ग्रैजुएट नहीं थे। कहावत है—जैसा मेहरबान तो वैसा पहलवान। किसी तरह बी० ए० पास कर लेने पर गजेटेड अफसरी का रास्ता खुल जाता है। संकल्प तो यह था कि साहित्यसेवा करेंगे और रोटी-नमक मिलता रहेगा। बालिग होकर भी नाबालिग बने रहे। अकल में सारी बातें समाती थीं, यही बात नहीं समाती थी कि रोटी और साहित्य का मामला एक ही अदालत में नहीं चलता। दोनों मामलों के जज अलग-अलग इम्तिहान पास करके आए होते हैं। इसलिए कम-से-कम इस उम्र तक बीसियों प्रेसों—कभी कुछ माह, कभी कुछ वर्ष—के लिए बैठ चुके हैं। छोटे-मोटे अखबारों के संपादक भी रहे मगर सम्पादक की जगह नाम कभी नहीं छपा। नाम तो उनके छपते थे जो पूंजी लगाने वाले होते या उनके जो दूसरों की किताबों की भूमिका लिख-लिखकर स्वनामधन्य बन गए थे। साहित्यिक सभाओं की अध्यक्षता करते-करते इनके नामों के आगे 'आचार्य' शब्द भी जुड़ गया था। सारांश यह कि मौलिक साहित्य-साधक भेड़ थे और ये गड़रिये। जब कोई 'नयी भेड़ इनके' आश्रम में आती, ये झट एक कैंची निकालते और उसके गुदगुदे रेशमी बाल काट लेते थे।

चारुचन्द्र को अब कम सूझता था। मगर वे तो प्रूफरीडर। यह काम करना ही पड़ता। मेज पर बायीं ओर हिन्दी अंग्रेजी संस्कृत और बंगला के शब्दकोश हमेशा रखते थे। पिछले छह महीने से चश्मा ठीक से काम नहीं कर रहा था कहीं कोई भूल छूट जाती और ग्राहक इशारा करता तो मालिक भीतर-ही भीतर दांत पीसता, मगर प्रकटतः शालीनता बरतने का अभिनय करते हुए कहता "चारुचन्द्र जी गलतियाँ बहुत छूट रही हैं। चश्मे का शीशा बदलवा लीजिए। ग्राहक बहुत शिकायत करने लगे हैं।"

"जी हां जी हां।"

"आप तो रोज 'हां' कहते हैं। किसी दिन सवेरे अस्पताल जाइए। उधर बोस साहब एक नए डाक्टर आए हैं। वे ठीक लाई

वजे पहुच जाते हैं।"

"जी अच्छा•••जी अच्छा।"

मालिक सिगरेट सुलगा लेता है। चारुचन्द्र की मेज़ पर प्रूफो का अम्वार लगा रहता है। चुपचाप प्रूफ पढने लगते हैं।

वाहर चिलचिलाती धप है। सवारिया नाम-मात्र को आ-जा रही हैं। प्रेस के स्वामी भोजन करने चले गए है। चार वजे तक लौटेंगे। चारुचन्द्र प्रूफ पढते-पढते थक जाते हैं, तो जरा सुस्ताने लगते हैं। अभी सुस्ता ही रहे हैं। निगाहें सडक पर जाती है, तो दिवाकर मलिक नज़र आते हैं। पैदल और परेशान। प्रफ तो वहुत सारे पडे हुए हैं। इन सवो को पढ डालना है। मगर, साहित्य और मगीत सहोदर हैं न! देखकर आखें नही वन्द की जा सकती। हृदय जैसे उछाल मारता है और मेज़ पर झुककर तेज आवाज़ लगाते हैं, "मलिक जी, मलिक जी! आइए, आइए। इस तपती दुपहरी मे कहा, महाराज ? "

दिवाकर को मालूम है कि चारु वावू इसी प्रेस मे नौकरी करते हैं। अत आश्चर्य न हुआ और 'नमस्कार, चारु वावू' कहते हुए भीतर चले आए। वगल मे एक ऐसी कुर्सी खाली पडी थी, जिसकी वायी वाह टूटी हुई थी, उसे ही चारुचन्द्र के सामने खीचकर वैठ रहे।

"वडी गर्मी पड रही है।" चारुचन्द्र ने कहा।

दिवाकर के वायें कन्धे पर किसी सम्मान-समारोह मे मिला हुआ एक दुपट्टा पडा हुआ था। उसे उतारकर उन्होंने चेहरे और गर्दन का पसीना पोछते हुए कहा, "गर्मी ज्यादा पड रही है न। देखिएगा, इस साल पानी खूव वरसेगा।"

"भगवान न करे!"

दिवाकर ने पूछा, "क्यो महोदय, कहते तो लोग ऐसा ही हैं कि जव ज्यादा गर्मी पडती है, तो पानी भी खूव वरसता है।"

"वात तो सही है। मगर, मैं अपनी स्थिति को याद कर ऐमा कह रहा हू। हालाकि मौसम को इससे कोई मतलव नही। मौसम यदि एक-एक आदमी का सुख-दु ख देखे, तव तो हद हो जाए।" कहते हुए चारुचन्द्र ने पूछा, "जल पीजिएगा ? ठण्डा पानी है।"

ज़रा बैठ लूं।

"यह भी आपने ठीक कहा। थोड़ा रुककर ही पीजिए, नहीं तो गला पकड़ लेगा।" चारुचन्द्र ने कहा।

प्रेस का मालिक खाना खाने के लिए जब बाहर जाने लगा था तो पंखे के स्विच को आफ कर गया था। फोन में तो वह अक्सर ताला डाले रहता। खुद भी रहता और कहीं फोन करता तो बातें कर लेने के बाद फिर शीघ्र ताला लगा देता। चारुचन्द्र अथवा प्रेस के अन्य कर्मचारियों को मात्र फोन रिसीव करने का अधिकार था। उधर से कौन बोल रहा है क्या कह रहा है सब कुछ याद रखना पड़ता ताकि मालिक के आने पर पूरी सूचना दी जा सके। हर माह फोन और बिजली के बिल आते और मालिक कुछ ज़ोर से हर माह बिल देखकर झल्लाता "बड़ा लम्बा चौड़ा बिल आया है। कहां से यह पूरा होगा। बड़ी मुसीबत है।"

उसकी अनुपस्थिति या उपस्थिति दोनों ही स्थितियों में चारुचन्द्र फोन तो कर ही नहीं सकते थे सिर्फ पंखा चला सकते थे। पर, यह भी मालिक की इच्छा पर निर्भर था। पंखा चलते हुए वह छोड़ जाता तो हवा का एक-चौथाई लाभ उठा लेते थे वरना जो वह स्विच आफ करके चला जाता तो उसे आन करना उनके साहस की बात नहीं थी। आज चारुचन्द्र से न रहा गया। मन-ही-मन सोचा—चाहे इसके चलते फाइनल हिसाब क्यों न मिल जाए, मगर पंखा चलेगा। सो अपनी जगह से उठ और पंखे का स्विच आन कर दिया।

मशीन रूम में मशीनें चल रही थी। आवाज़ गूंज रही थी। एक छोटी मशीन—ट्रेडल—दो बड़ी मशीनें—फ्लैट। पीछे की ओर एक कमरा था। प्रूफरीडिंग का काम शान्ति में होना चाहिए। चारुचन्द्र ने एक बार इशारा किया था कि उन्हें पीछे वाले कमरे में बैठने दिया जाए। मगर, मालिक सौ साल आगे की दुनिया की कल्पना दिमाग में रखता था। उसने समझ लिया इस प्रस्ताव के पीछे चारुचन्द्र जी की गहरी चाल है। पीछे वाला कमरा उत्तर की ओर खुलता है। आराम से जितना प्रूफ पढ़ा जाएगा पढ़ेंगे, बाकी समय में मेज़ पर सिर झुकाकर सोयेंगे। वे

आएगी, तो कवि-कल्पना मे डूब जायेंगे। बडी चालाकी से बोला था, "चारुचन्द्र जी, आप ठीक कहते है। मगर, इससे कोई खास फायदा नही। यहा सामने रहने पर आपके कारण कई समस्याए हल हो जाती हैं। मसलन कई लोग निमन्त्रणपत्र छपवाने आते हैं, उनकी भाषा ठीक नही रहती, आप भाषा सुधार देते हैं। मेरी अनुपस्थिति मे आप ग्राहको से बातें कर लेते हैं। फिर कई ग्राहक तो कुछ छपवाने के बहाने अपको देखने आ जाते है। आप कोई मक्षिका स्थाने मक्षिका बिठाने वाले प्रूफरीडर थोडे ही हैं। हिन्दी साहित्य मे आपका स्थान है, महाराज—और हा, एक बात और सुन लीजिए। मैं आपको प्रूफरीडर नही, गौरव और शोभा मानता हू। है यहा कोई ऐसा, जो आपके मुकाबले रस, छन्द और अलकार की जानकारी रखता हो ?"

चारुचन्द्र के आश्रितो का पेट भले ही न भरा हो, मगर इन शब्दो ने जैसे चारुचन्द्र के पेट के कोने-कोने मे मक्खन और मलाई भर दी। कितना ज्ञानी है यह समाज का एक स्तम्भ! कला नहीं जानता, मगर कलाकार की सबसे ज्यादा कमजोर नस को बिना चिमटे के पकड लेता है। चारुचन्द्र ने खुश होकर कई बार 'जी हा, जी हा' कहा था।

"और सब तो ठीक है न ?" दिवाकर मलिक ने पूछा।

चारुचन्द्र बोले, "ठीक ही समझिए' 'इस बार जो पानी जोरो से बरसा, तो जिस मकान मे मैं रहता हू, उसकी दीवारें धस जाएगी। मामूली वर्षा मे तो बुरा हाल हो जाता है। मकान-मालिक मरम्मत कराने का नाम नही लेते।" फिर कुछ सोचकर कहने लगे, "अपना भी कुछ कहने का साहस नही होता। पाच महीने का किराया बाकी है। हर बार यही सोचता हू कि कम-से-कम दो महीने का भार एकसाथ उतारू और ऐसा करने का सयोग ही नही आता। दो महीने तो बिजली का बिल भी नही दे सका। मकान-मालिक का लडका जब आता है, लाइन काट देता है। चुप रहने के सिवा कोई रास्ता नही। आपका तो मलिक जी, खैर, अपना मकान है। अपने घर के नाम पर एक झोपडी ही सही, बहुत बडी बात है।"

"हाँ यह तो है। अच्छा अब आप एक गिलास ठंडा जल पिलवा दीजिए।

"रामू ओ रामू ? जरा पण्डित जी को एक गिलास पानी तो पिलाना।

"मैं मशीन पर हूँ ।" अन्दर से आवाज आई।

"अच्छा तुम रहो मशीन पर।" कहते हुए चारुचन्द्र स्वयं उठे और एक गिलास ठण्डा जल लेकर वापस आए। दिवाकर मलिक ने उनके हाथ से गिलास थामते हुए कहा "आपने क्या कष्ट किया चारु बाबू ? बतला देते मैं ही ले लेता। आप इतने बड़े कवि ठहरे ।" गद् गद् गद्

"कोई बात नहीं। को बड़ छोट कहत अपराधू।"

दिवाकर मलिक ने स्वयं उठकर गिलास यथास्थान रख दिया। अब वह जैसे कुछ कहना चाहते थे पर शब्द गले में ही अटक रहे थे। तभी शब्दों को बाहर निकालने का सूत्र मिल गया। चारु बाबू ने कह दिया "परसों मेन रोड पर देहात के एक आदमी को लू लग गई। लड़खड़ा कर जो गिरा सो फिर उठा नहीं। अगल-बगल के दुकानदार पानी पिलाते रह गए।

दिवाकर बोले "बिना जरूरत कोई टहलने-घूमने तो निकल नहीं सकता। मैं भी लाचारी में निकल पड़ा।

"लाचारी इस वक्त निकलने की कैसी लाचारी थी

दिवाकर मलिक ने कहा "मंझली लड़की को जोरों का बुखार है। चार रोज हो गए। सुई लगती है तो थोड़ा उतरता है।

"सुई लग रही है न ?

"रात से रुक गई है।"

"क्यों उसे तो जारी रखिए।"

"मैं तो रोकना नहीं चाहता था।

"तो क्यों रोका ?

दिवाकर मलिक ने एक दीर्घ निःश्वास छोड़ते हुए धीरे से कहा "पैसे ही नहीं हैं कि सुइयां और दवाएं खरीदी जाएं। सोचते-सोचते निकल पड़ा। उसकी बेचैनी और छटपटाहट देखी नहीं गई। दस रुपए भी कर्ज आते, तो काम चल जाता। और आपाधापी नजरों से चारु[illegible]

देखने लगे। स्पष्ट शब्दो मे मागने का साहस नही हुआ।

"दस रुपए ···।" कह कर चारुचन्द्र ने जैसे भीतर-ही-भीतर एक आह भरी। एक रुपया भी दे सकने की स्थिति मे नही थे, मगर दिल चाहता था कि हज़ार रुपए दे डाले। बोलते क्या? जब कुछ दे नही सकते, तो बोलते क्या? एकदम चुप! दिवाकर समझ रहे थे कि चारु बाबू इस समस्या को हल करने की दिशा मे कोई उपाय सोच रहे हैं।

"कल बाईस तारीख है न?"

"हा।"

चारुचन्द्र का उत्साह फिर फीका पड गया। उन्हें यह बात स्मरण हो आई थी कि प्रेस-मालिक बाईस तारीख को चलते हुए महीने के वेतन से एडवान्स दिया करते हैं। उन्होने सोचा, दिवाकर जी को यह कहा जाए कि आज आप किसी और से ले लीजिए और कल ही लौटा देने का वादा भी कर दीजिए। पर, भला यह कैसे होगा? कुल जमा पौने दो सौ रुपए माहवार की नौकरी है। दस-पाच करके अब तक मालिक से साठ रुपए ले चुके हैं। एडवान्स तो वेतन का आधा ही मिलता है न! मालिक बहुत खुश होंगे, तो तीस रुपए कल दे देंगे, और कल ही किसी और को बीस रुपए देने हैं। बच जाएगे दस रुपए। घरखर्च के लिए भी कुछ चाहिए। जमालखा मानने वाला नही। उसे रुपए न पहुचे, तो वह तेईस तारीख की सुबह आठ बजते-बजते अपनी चाबियो के झब्बे से दस्तक देगा। दरवाज़ा खोलते ही तीखे स्वर मे बोलेगा—"तुम कल आया नहीं ?"

चारुचन्द्र रुपए के बदले कोई आश्वासन भी देने मे असमर्थ थे, चुप रहे। इसी बीच प्रेस-मालिक आ गया। उसने दिवाकर मलिक पर उडती हुई निगाह डाली। फिर देखा, पखा चल रहा है। चारुचन्द्र डर गए। अभी अगर एक मिनट पहले पखे को बन्द कर दिया होता, तो मालिक की निगाह कुछ दूसरी तरह से पडती।

"क्या हुआ, चारु बाबू, प्रूफ सब पढ दिए गए?"

"जी नही।"

"क्यो, नही क्यो?"

"दो तो पढकर दे दिए हैं। मूल कापी बहुत गन्दी है। रुक-रुककर

पड़ना पड़ता है।"

दिवाकर मलिक की पीठ मालिक की ओर थी। वह शान्त रहे। हिले-डुले तक नहीं। प्रेस के काम उनकी समझ में आते भी नहीं। उनसे सुनना ही चाहें तो पूछ लीजिए नृत्य के बारे में कुछ।

"अच्छा नटवरी का टुकड़ा? कहते वह मुस्करा पड़ेंगे और सुनाएंगे

"तिगदाऽतिगदाऽथेई,
तिगदाऽतिगदा ऽ थेई
तिगदा दिगदिगतिगदादिगदिग।
तत् तत् तत् तत्
थेई।'

ऐसे हजारों बोल उनके दिमाग में भरे पड़े हैं। तीस साल इन बोलों को याद करने और नाच कर उनका स्वरूप दिखलाने में बिता दिए हैं। मगर यहां तो माहौल ही दूसरा है। मालिक चोरों से मन्ना न पड़े इसलिए उसका ध्यान बांट देने के इरादे से चारु बाबू दिवाकर मलिक की ओर संकेत करते हुए कहते हैं "इनसे पहले से परिचय है कि नहीं? आप हैं दिवाकर मलिक। कत्थक के आचार्य।

'अच्छा अच्छा। मालिक जैसे कोई नोट नहीं लेता। उसकी नजर में ऐसे लोग कोई हस्ती नहीं होते। उसके हृदय में तो इलेक्ट्रिक सप्लाई विभाग का वह बड़ा बाबू हस्तीवाला है, जो दस प्रतिशत कमीशन पर उसके प्रेस को काम देता है। दिवाकर मलिक से परिचय कराने की जगह यदि चारुचन्द्र ने यह कहा होता कि 'बिजली आफिस के बड़े बाबू ने फोन किया था। चार-पांच बजे आयेंगे। कुछ काम है जल्दी छाप कर देना है' तो मालिक भूल जाता कि धंधा क्यों चल रहा है। फिर झट बड़े बाबू को फोन कर कहता "आइए हुजूर, मैं स्वागत करने की प्रतीक्षा में हूं। साढ़े तीन होने ही जा रहे हैं।"

मगर इस प्रकार का कोई संदेश था ही नहीं।

चारुचन्द्र ने फिर कहा "आपने तो इनका नृत्य देखा भी होगा।

दिवाकर मलिक धीरे से पीछे की ओर घूम गए।

मालिक बोला 'देखा होगा याद नहीं।"

"नमस्कार।" दिवाकर मलिक ने हाथ जोडकर कहा।

"नमस्कार ···।" वडी अनिच्छा से वोलते हुए मालिक ने कहा, "चारु वावू, इस गति से काम नही होगा। आज फर्स्ट आवर मे मैं वैंक गया हुआ था। वहा से भी काम आने वाला है। एक लाख फार्म छापने हैं। उन्हें तीन रोज़ के अन्दर चाहिए। और आप हैं कि कच्छप गति में चल रहे हैं।"

"सवको पढे डालता हू।"

"आप तो हर रोज़ यही कहते हैं, जनाव!" मालिक का तेवर वदल गया।

कई खण्डकाव्य, प्रवन्धकाव्य और उपन्यासो के रचनाकार ने किसी चुनौती की सम्भावना देखी, तो कापते हुए स्वर मे कहा, "वैसे तो मैं यही कोशिश कर रहा हू कि सारे प्रूफ पढ डालू, लेकिन यदि कुछ वच भी गए, तो साथ लेता -ाऊगा। रात मे सवो को ठिकाने लगा दूगा और सवेरे लेता आऊगा।"

प्रेस के गौरव और शोभा को एक प्रकार मे फटकारते हुए मालिक ने कहा, "देखिए चारु वावू, आपकी नज़दीक की दृष्टि अव ठीक से काम नही करती और आप चश्मे का शीशा वदलवा नही सकते। काम इस तरह चलने का नही। मेरी राय मे तो, हालाकि कहते हुए मुझे खुद वुरा लगता है, आप अव आराम कीजिए। मैं किसी और आदमी की तलाश कर लूगा। आपकी तरह वह विद्वान तो नहीं होगा, मगर· ·।"

चारुचन्द्र को रस, छन्द, अलकार के जितने उदाहरण याद थे, जैसे वे सव के सव भूल गए। वह चुपचाप प्रूफ पढने लगे। दिवाकर मलिक ने धीरे मे कहा, "वन्धु, आप काम कीजिए। मैं चलता हू।"

चारुचन्द्र प्रूफ पर सिर झुकाए रहे। दिवाकर मलिक उठकर सडक पर आ गए।

9

युवावस्था में जिस कुमारी के चित्त और चितवन—दोनों ही चंचल हों उसके कौमार्य की रक्षा विधाता भी नहीं कर सकता मनुष्य की भला क्या बिसात ! कल्याणी का भी यही हाल था। वह युवा पुरुषों की ओर बड़े गौर से देखा करती और उसके मन में कभी-कभी विकार भी उत्पन्न हो जाया करते थे। ऐसा क्यों होता है इसके लिए उसके पास कोई तर्क नहीं था। वह इसे बस स्वाभाविक मानती थी। दिवाकर मलिक ने उसे नृत्य की इतनी प्रारम्भिक शिक्षा दे दी थी कि वह छोटे छोटे बच्चों को नृत्य की शिक्षा दे सकती थी।

सयानी कन्या घर में दिन-रात घुटती रहती है ऐसा सोच कर दिवाकर मलिक ने तय किया कि इसे अपनी ही लाइन का कोई काम मिल जाए, तो यह अपने को किसी काम में लगी-बंधी पाएगी और पारिश्रमिकस्वरूप कुछ अर्थप्राप्ति भी होती रहेगी। अपने घर से चार मकान उत्तर रमोला दीदी रहती थी। कल्याणी से चार-पांच साल बड़ी होंगी—भरा-पूरा शरीर, बड़ी-बड़ी आंखें। बी॰ ए॰ पास थी और किसी नौकरी की तलाश में थीं। पखवाड़े-भर पहले किसी ने बतलाया कि रमोला की एक स्कूल में नौकरी लग गई है। स्कूल गुरुद्वारे का था और सरकार से इसे मंजूरी नहीं मिली थी। सिख समुदाय वाले आपस में चन्दा करके यह स्कूल चला रहे थे—सातवें वर्ग तक पढ़ाई होती थी। गुरुद्वारे की इमारत काफी बड़ी थी और उसी के एक हिस्से में स्कूल चल रहा था। नाम था—गुरु नानक विद्यालय।

गुरुद्वारा प्रबन्धक कमेटी के प्रेसीडेण्ट के पास रमोला का आवेदन दो माह पहले से पड़ा था। स्कूल को अंग्रेजी पढ़ाने वाली शिक्षिका की आवश्यकता थी। प्रेसीडेण्ट साहब चाहते थे कि इस पद का भी कोई सरदारिन शिक्षिका ही सुशोभित करे। पर, जब कोई 'और' नहीं मिली तो रमोला को रख लिया गया। वैसे मन में यह बात छुपा कर रख ली

गई कि अंग्रेज़ी पढ़ाने वाली किसी 'कौर' के मिलते ही रमोला का पत्ता साफ कर दिया जाएगा।

दिवाकर मलिक कल्याणी के लिए बात करना चाहते थे। उसने प्राइवेट इम्तिहान देकर मैट्रिक पास किया था, छोटे बच्चो को नृत्य आसानी से सिखला सकती थी। मगर, सकोची स्वभाव के कारण कुछ कहते नही बनता था। इसी सकोच मे चार माह बीत गए। रमोला अपने बाप के घर ही रहती थी। वह विधवा थी। पति के साथ पाच साल रही। पांच साल मे उसे गर्भवती होने का एक बार भी आभास तक न हुआ और छठा साल आते-आते उसका आदमी अचानक पेटदर्द से चल बसा। ससुराल-वालो की दृष्टि मे वह बाझ-वन्ध्या के अतिरिक्त 'आदमी को खा जाने वाली' भी मानी जाने लगी और वहा उसका रह पाना दूभर हो गया। मायकेवाले अच्छे खाते-पीते थे, लेकिन समय तो उसे भी काटना था। समय काटने के अलावा एक और कारण था—भाई-बाप रमोला को आखो पर बिठाते थे, मगर भाभियो के लिए तो वह आख की किरकिरी थी। जब तक बेचारी सुहागिन थी, ये भाभिया बुलावे-पर-बुलावा भेजती। जब सुहाग लुट गया और वह यहा वैधव्य काटने आई, तो भाभिया घुमा-फिरा कर उसे ऐसी कहानिया सुनाने लगी, जिनका सार यह होता था कि पति के मरने पर नारी को या तो पति के साथ सती हो जाना चाहिए या फिर पति की याद में इस तरह घुटते रहना चाहिए कि ब्रह्मा की खोची हुई लम्बी आयुरेखा अपने-आप छोटी हो जाए। भाइयो ने ठीक ही सोचा कि बहन जब कही नौकरी पकड लेगी, तो कुछ लाकर देगी भी और इस प्रति माह के 'देने' से रमोला को दूसरी प्रकार की कहानिया सुनने को मिलेंगी।

रमोला के स्वभाव मे गजब का प्यारापन था। वह सहना जानती थी, कहना नही। उसे ठगे जाना पसन्द था, ठगना नहीं। भीतर चाहे लाख आग भरी हो, बाहर से वह एक निहायत ताज़ा खुशनुमा गुलदस्ता ही थी।

वह यदाकदा दिवाकर मलिक के घर थोडी देर के लिए आ जाया करती और दमयन्ती, कल्याणी तथा वागेश्वरी से दु ख-सुख बोल-बतिया-कर लौट जाती। औरतो मे जो एक अवगुण पाया जाता है कि बिना इस

या उसकी शिकायत किए उन्हें चैन ही नहीं पड़ती उसमें नहीं था। वह बस अपने ही तक सीमित रहती। मुहल्ले भर की ताजा खबरें न उसके पास होतीं और न वह ऐसी खबरों का संग्रह करना ही पसन्द करती थी।

ऐसे ही जब वह एक रविवार को इनके घर आई तो बैठक में घुसी और सीधी अन्दर जाने लगी। उसने इधर-उधर नजर नहीं डाली। डाली होती तो दिवाकर मलिक के आगे अवश्य शीश झुकाती। वह पूरब की ओर बालकृष्ण की मूर्ति के समीप अधलेटे किसी नाटक के लिए बोल तैयार कर रहे थे। सामने एक छोटी-सी कापी थी और वह बोल तैयार करने में गहरी सुध-बुध खोए हुए थे।

थोड़ी थकावट महसूस हुई तो ध्यान बंटा। आंगन की ओर चल दिए। आते ही रमोला पर नजर पड़ी। पूर्वी घर से बाहर कहीं पास ही गई थी। दमयन्ती ने बरामदे में चटाई बिछाकर रमोला को बिठा लिया था। कल्याणी और वागेश्वरी दीवार से पीठ सटा कर उसके दाएं-बाएं बैठ गई थी। दमयन्ती पूर्वी की फ्राक की मरम्मत करने लगी थी। बीच-बीच में कुछ बोल भी देतीं। वागेश्वरी की आवाज में वागीश्वरी की ही मृदुलता और कामलता थी मगर वह बेहद कम बोलती थी। रमोला आती तो जानबूझकर उसे सम्बोधित किया करती। वागेश्वरी प्रसंगानुसार कभी मुस्करा पड़ती कभी कुछ बोल देती और कभी मौन रहकर कदम देखती रह जाती।

रमोला पर नजर पड़ते ही दिवाकर मलिक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए बोले "अच्छा रमोला बिटिया आई है!"

रमोला जैसे चौंक पड़ी। उसने दोनों हाथ जोड़ लिए।

आशीर्वाद देते हुए दिवाकर मलिक ने कहा "बैठो बिटिया बैठो। मगर एक काम करना।

"क्या, बाबाजी?"

"जब लौटने लगो तो मुझ से मिल लेना। मैं बैठक में ही हूं। पढ़ाने तो जा रही हो न?"

"जी बाबाजी। रमोला बोली।

फिर उन्होंने दमयन्ती से पूछा, "पूर्वी कहा है ?"

उत्तर मे दमयन्ती ने सिर्फ उन्हें देखा, कुछ कहा नही।

कुछ देर वाद जब रमोला वापस जाने लगी, तो वैठक मे आकर ठिठक गई। दिवाकर मलिक का ध्यान वटा। रमोला ने सहज विनय-भरे स्वर मे पूछा, "क्या आज्ञा है, चाचाजी ?"

दिवाकर मलिक ने उसे आखो के सकेत से पास वुला लिया। वोले, "वैठ जाओ, वैठ जाओ।"

रमोला पायताने सिमट कर वैठ गई। सर से आचल सरकने लगा था, उसे सभाला। दिवाकर मलिक ने पूछा, "स्कूल मे मन लग रहा है न, वेटी ?"

"जी, सव ठीक है।"

"सुनो, तुम्हारी वहन कल्याणी के लिए वहा कुछ हो सके, तो सोचो। छोटे वच्चे और वच्चियो ही को तो पढाना है। तुम जानती ही हो कि यह मैट्रिक पास है। वच्चो को पढा सकती है, नाचना-गाना सिखा सकती है। मैं चाहता था कि जव तक इसका व्याह नही हो जाता ।"

रमोला जैसे सव कुछ समझ गई। वीच मे ही वोली, "एक दिन सरदार जी कह रहे थे कि वच्चो को थोडा नाच-गान सिखाने का भी प्रवन्ध होना चाहिए। कोई टीचर मिल जाए, तो पश्चिम वाला हाल इस काम आ जाएगा।"

"तो फिर कहो उनसे। वतला देना कि किसकी लडकी है।"

"अच्छा, मैं कहूगी।" रमोला ने तनिक रुककर आगे कहा, "परन्तु, चाचाजी, वहा एक वडा भारी दकियानूसीपन है।"

"क्या ? वे लोग वी० ए० पास टीचर चाहते हैं ?"

रमोला ने उत्तर दिया, "नही, उन्हें कोई 'कौर' चाहिए।"

" 'कौर' चाहिए, मतलव ?"

"चाचाजी, पहले मैं यह वात नही जानती थी। अव पता चला है कि हर सिख औरत के नाम के वाद 'कौर' लगा रहता है। धीरे-धीरे सारी वातें मालूम हो रही हैं।" रमोला वोली।

"क्या और भी कोई वात है ?"

'हाँ आप कभी आकर ध्यान से देखिए। गुरद्वारे के पूरबी हिस्से में बाहरी रूप की बीसियों दुकानें हैं।"

'हाँ हैं तो सही।"

रमोला ने कहा "उनमें से एक भी दुकान का स्वामी गैरसिख नहीं है। मतलब यह कि इस मामले में वे लोग बड़े संकीर्ण हैं। आसपास पाँच सौ से कम सिख-परिवार नहीं हैं। गैरसिख की दुकान में अगर किसी चीज का दाम सिख की दुकान से चार आने कम हो तो भी वे वहां से सामान नहीं खरीदेंगे। बिहारियों बंगालियों या गुजरातियों मद्रासियों को तो आप छोड़ दीजिए, उन दुकानों में एक भी दुकान किसी पंजाबी हिंदू के हाथ नहीं उठी है। वे सबों में अपना कारोबार करते हैं जरूरत पड़ने पर महाराष्ट्रीय और ईसाई से भी दोस्ती गांठ लेते हैं मगर उनके दिलों की बस्ती में अगर एक इंच भी जमीन खाली होगी तो वे उसे किसी सरदार जी या किसी 'कौर' को ही देंगे। वे रहते तो हिन्दुस्तान में हैं मगर उनके दिलों के भीतर दूसरे देश की कल्पना रहती है।

"वह कौन-सा देश है?" दिवाकर मलिक ने बड़ी उत्सुकता से पूछा।

रमोला ने उत्तर दिया "वह देश है—सिखिस्तान।

"हे भगवान" हे भगवान" "इस एक हिन्दुस्तान में और कितने स्तान निकलेंगे? दिवाकर मलिक बोले "यह हाल सिखों का ही नहीं औरों का भी है। हरिजन अपनी डफली अलग बजाते हैं, ठाकुर अलग। नेतागण जाति और फिरकापरस्ती के खिलाफ बोलते हुए नहीं थकते और फिर इसी नाम पर अपने चुनावक्षेत्र में वोट भी बटोरते हैं। बिटिया ये सारी बातें मेरी समझ में नहीं आती। यहां तो मुजरे और परन गाने से वास्ता रहा।

सुन कर रमोला बोली "हमारे यहां वर्णविहीन समाज का नारा इतने जोरों से लगाया जाता है कि उसकी आवाज आसमान तक जा पहुंचती है। लोग चुनाव लड़ कर सरकार का अंग बनते हैं और वहां जाकर खुद जातिवाद वर्गवाद को जोरों से जगाते हैं। खैर, चाचाजी मैं मौका मिलते ही प्रेसीडेन्ट साहब से कहूंगी। कल वह स्कूल में आएंगे भी।"

'बड़ा पुण्य होगा बिटिया।' दिवाकर मलिक बोले। रमोला ने उन्हें हाथ जोड़े और अपने घर चली गई।

नाटक अभी खत्म नही हुआ है ।

अभी-अभी सारी फुटलाइटें जली हैं। परदा उठने वाला है। दर्शको ने अपनी आखो पर से पट्टिया नही उतारी हैं। कुछ पुरुष दर्शक धूम्रपान करना चाहते हैं। सिगरेट-माचिस चाहिए, और वे इन दो चीज़ो के लिए अगल-बगल बैठे हुए दर्शको की जेबो मे हाथ डालने लगे हैं। दर्शको मे महिलाए भी है। वे अपने गालो और ललाट पर रुमाल फिराना चाहती हैं। इसके लिए वे भी ऐसा ही करती है। दूसरी के पर्स को चुपके-चुपके टटोल रही हैं।

घण्टे, दो घण्टे, चार घण्टे पास बैठने का रिश्ता।

सभी रिश्ते को भुनाना चाहते है। यही आधुनिकता है, समयबोध है, युगबोध है, कालबोध है। जो रिश्ता दूध की खाली बोतल को नही भर पाता, उस रिश्ते को लोग बूचडखाने के दरवाज़े पर छोड आते हैं। रिश्ता बेचारा घबडा कर इधर-उधर देखने लगता है, तब तक बूचडखाने का कद्दावर मालिक झपट कर उसे अन्दर खीच लेता है।

अरे ! अरे !!

वह देखिए, फुटलाइटो पर कोई रगबिरगे कागज के टुकडे लपेट रहा है। आगे का खेला शुरू होने वाला है।

लोग विशुद्ध कला के प्यासे हैं न !

मगर ये सब-के-सब बदमाश हैं। इनमे स्वय ही कोई शुद्ध नही है, निखालिस नही है। ये सारे तमाशा देखने वाले हैं।

हाय, परदा उठता है !

परदा गिर जाता है। इस प्रक्रिया मे यह दिखलाया गया कि दिवाकर मलिक चबूतरे पर पेट के बल नीद से सोये हुए हैं।

पिछला परदा गिर जाता है और अगला परदा उठ जाता है। जैसे हृदय परदे के पीछे है और शरीर सामने। वही पुरानी बैठक।

नेपथ्य से दस्तक होती है। दमयन्ती आती है। आँखों में उनींदी के साथ एक जिज्ञासा भी है। [illegible] की ओर बढ़कर पूछती है "कौन?

"मैं!

"मैं कौन?

"हैदर।"

दरवाजा खुल जाता है। आगन्तुक बड़े संकोच से भीतर कदम रखता है। पतलून-कोट और टाई में है। पचास साल से कम का नहीं। सेहत अच्छी है। पैंतीस साल से अधिक का नहीं लगता। 'आदाब अर्ज' करता है और चेहरे मुहब्बतभरी आवाज में पूछता है, "दिवाकर भाई घर में हैं न?

"आपका आना कहाँ से हुआ?"

अजी, मैं यहीं से आया हूँ। दिवाकर साहब मेरे पुराने अजीजों में हैं। आप उन्हें कहिए, हैदर आया है उछल पड़ेंगे।"

"ऐसा?"

"और नहीं तो क्या!

"पहले तशरीफ तो रखिए"।

दमयन्ती की पढ़ाई-लिखाई साधारण हुई थी। उच्च कुल की ब्राह्मण-कन्या थी। मायके में थोड़ी संस्कृत पढ़ी थी, थोड़ी हिन्दी। ससुराल में कुछ स्वाध्याय का अवसर मिला कुछ दिवाकर मलिक की संगति का असर। पढ़े-लिखे लोगों से कायदे से बातें कर लेती थी। लेकिन सब कुछ नाप-तौल के भीतर। सारी हँसी होंठों के भीतर ही रहती। ठहाके कैसे लगाये जाते हैं जानती तक न थी। दिवाकर मलिक संगीत-समारोहों के अनुभव सुनाया करते थे। उससे भी कुछ ज्ञान बढ़ा था। पति की अनुपस्थिति में भी कुछ लोग आ ही जाते थे। यह तो कोई जरूरी नहीं था कि जब कोई मिलने आये, तब दिवाकर मलिक घर में हों ही। मुनिया सयानी हो गई थी। दिवाकर मलिक की सख्त हिदायत थी कि वे बाहरी लोगों के सम्पर्क से अलग रहें। वे उनसे तभी मिलकर कुछ बोल सकती हैं — —मयन्ती किसी कारणवश घर में न हों।

स्पॉट लाइट भी जल उठती है।

मद्धी रोशनी दमयन्ती और हैदर के चेहरे को पर्याप्त स्पष्टता से

उजागर करने लगती है।

दिवाकर इस समय घर मे है या नही, इस प्रश्न को दमयन्ती गौण वना देती और वडे हौले मे कहती है, "ये तो सचमुच वडे दोस्तनवाज़ हैं। कभी इस दोस्त, कभी उस दोस्त की चर्चा किया ही करते है। अब इनमे कौन इनका सच्चा और कौन झूठा दोस्त है, यही जानें। अब आपसे क्या वतलाऊ, पहाडपुर स्टेट के वावू साहव के वारे मे भी कहा करते हैं कि वे मेरे दोस्त हैं। एक की वात हो, तो कही जाए ··सैकडो लखपती जैसे इनके घुघरुओ से लिपटे रहते हैं।"

हैदर कुछ मुस्करा कर कहता है, "जाहिर है। दिवाकर भाई अपने फन के आफताव हैं। फिर वडे-से-वडा और छोटे-से-छोटा आदमी इनकी दोस्ती पर नाज़ करता होगा।" हैदर एक शेर पढना चाहता है और अपनी गर्दन शायराना अन्दाज़ मे घुमाता है। अर्ज़ करने लगता है, "हज़ारो साल नरगिस अपनी वेनूरी पे रोती है, वडी मुश्किल से होता है ।"

दमयन्ती के लिए यह शेर कुछ नया नही है। खडी-खडी पूछ वैठती है, "कव से आपकी दोस्ती है इनसे ?"

हैदर वडी वेतकल्लुफी से कहने लगता है, "अजी, कुछ न पूछिए, फनकार मे एक दिन की दोस्ती हज़ार साल की दोस्ती का मुकावला करती है। आपको दिवाकर भाई ने वतलाया भी होगा कि वहुत छोटी उम्र मे ही ये घर से भाग निकले थे···।"

"हा, नृत्य सीखने के लिए।"

"जी हा, आपने सही फरमाया। आपको इन्होने यह भी वतलाया होगा कि हैदर यही के शाहगज का रहने वाला है।"

"जी, यह नही मालूम।"

"खैर, तो हम लोग स्कूल के दिनो के दोस्त ठहरे।"

"वाह · मगर आप इसके पहले कभी आए नही।"

"अजी, आने को तो समझिए मैं तडपता था। दिवाकर भाई तो स्कूल-कालेज की पढाई से मुखालफत ही करते रहे। फन की दुनिया का इन्सान कुछ होता ही ऐसा है। डास-मास्टर वनने के लिए जिन दिनो ये

मथुरा, बनारस मसमऊ, ग्वालियर, राजस्थान के नामी डॉक्टरों के यहाँ चक्कर लगाते रहे मैं कालेज की पढ़ाई करता रहा। मुश्त के करम से बी० ए० पास किया और' ।'

और ?"

"शहर के महकमे में मुलाजिम हो गया। पाँच साल किरानीगीरी करनी पड़ी। फिर मजेस्ट्रेट अफसर हो गया। कह कर हैदर ने जरा सिर उठा कर दमयन्ती की ओर देखा मानो जतलाना चाहता हो कि जो हैदर उससे बातें कर रहा है वह कोई ऐसा-वैसा मस्खरा नहीं है। वह मजेस्ट्रेट अफसर है मजेस्ट्रेट। छोटी-बड़ी कई किताबें रट कर उसने कमीशन का इम्तिहान पास किया था। तब मजाक का था उसका जनरल नालेज। अफ्रीका व अमरीका में पाये जाने वाले बेहूद खूंखार जानवरों के नाम फौरन बतला सकता था। क्या पता कमीशन के इम्तिहान में क्या पूछ बैठें ? तब उसे यह भी याद करना पड़ा था कि डा० घुसवर कौन थे और फ्रांस की राज्यक्रांति के मुख्य कारण क्या थे ? उसे तब यह भी याद था कि सबसे पहले वैज्ञानिक पद्धति से किसने नील बनाया और हिन्दुस्तान के किन-किन इलाकों में विलायती गन्ने पाए जाते हैं। हालांकि परीक्षा में सफलता प्राप्त करने और मजेस्ट्रेट अफसर की कुर्सी पर बैठने के बाद वह रोज ही अनुभव करता है कि कम्पीटिटिव एग्जामिनेशन पास करने के लिए उसने जो कुछ पढ़ा और याद किया था इस कुर्सी से उसका दूर का भी रिश्ता नहीं रह गया। मौत के कुएँ में छलांग लगाने के बाद बतौर इनाम के एक मजबूत नौकरी मिली जो हर पहली तारीख को अपने साथ एक बमंत लाती है इस बात के लिए उसकी तारीफ करनी चाहिए कि उसके सारे जेनरल नालेज को नौकरशाही ने बिना कफन के दफन कर दिया और अब जब वह अपने दफ्तर की सीढ़ी से ऊपर जाता है तो हर बात में बोलता है— 'यस सर' और जब फिर नीचे उतर कर आता है, तो खुद मातहतों से सुनता है—'जी हुजूर'। जहाँ से उसे 'सलाम' आता है वहाँ पहुँच कर दांत निपोड़ता है और जहाँ उसे 'जी हुजूर' सुनते रहने का दिन-भर मौका मिलता है वहाँ दांत गड़ा देने का तेवर बनाये रखता है। जब अपने कानों से सुनता है कि उसका चपरासी बड़े बाबू से कह

बुला रहे हैं' तो उसके सीने मे एक गुदगुदी-सी उठती है। लगता है, जमाने की बिछुडी हुई महबूबा मिल गई और मिलते ही उसने मुहब्बत से लबरेज अपने गरम-गरम होठो को, जिन पर हल्की-गुलाबी लिपस्टिक की कलई की हुई है, उसके होठो पर एकाएक रख दिया।

नौकरशाह, जिन्दाबाद !

यह भी अपनी दुनिया का सुलतान होता है।

हैदर आगे कहता है, "दिवाकर साहब छुटपन से ही बडे जजबाती किस्म के इन्सान रहे और तभी तो आर्ट की दुनिया मे शोहरत उनकी कदमबोसी करती है।"

"सिर्फ शोहरत की दुनिया मे, हैदर साहब !"

"क्या मतलब ?" हैदर जैसे चौंकता है।

दमयन्ती खुल जाती हैं। कहती है, "शोहरत एक ऐसा आसमानी महल है, जिसके कोने-कोने मे घूम जाइए, मगर कपडो के नाम पर यहा न एक रूमाल मिलेगा, दवाओ के नाम पर किसी मिक्चर की खाली शीशी तक न मिलेगी, अनाज के नाम पर चुहिया भी मारे भूख के तडपती नजर आएगी और सर के नीचे एक अपनी छत हो, इसके बदले मे यही आवाज सुनायी पडेगी – यह महल बडे-बडे नौकरशाहो और व्यापारियो के लिए है, जनप्रतिनिधियो के लिए है और जनप्रतिनिधियो के चमचो के लिए है · ।"

सुन कर हैदर जैसे एकदम से उछल जाता है। कहता है, "आप भी चुटकिया लेना खूब जानती हैं। कलाकार-फनकार तो अजीबोगरीब होते ही हैं। वे तो अपने आर्ट मे इस कदर मशगूल रहते हैं कि पेड की छाया हो या महल की छाया, उनके लिए कोई फर्क नही पडता। इनकी हस्ती ही अलग होती है। वे तो ख्वाब मे भी किसी का अहसान लेना नही जानते।"

दमयन्ती अपने आचल को सिर पर से सरकने नही देना चाहती। उसे सभालती हुई कहती हैं, "कोई अहसान करने को तैयार भी तो नही होता। लोग तो यही चाहते हैं कि अगर किसी कलाकार को बूद-भर पानी पिलाओ, तो प्याला भर उसका खून चूस लो।"

"हैं हैं आप यह क्या सुना रही है ? मैं एक अदना आदमी हू, मगर

इस पर जान देता हूं 'जी हां । कालेज के दिनों में मैंने एक सौ इक्यावन गज़लें लिख मारी थीं । बुरा हो उस फ़र्स्ट इयर वाली लड़की शहाना का ग़ज़ल गाने की शौकीन थी मेरा पूरा दीवान ही उड़ा लिया उसने मुख़्तसर यह कि मैं भी फ़नकार का एक छोटा-सा दिल रखता हूं ।

नाटक का डायरेक्टर बड़े चालू किस्म का लगता है ।

परदे को उलट-पलट देता है और स्टेज पर दिखाकर मलिक नज़र आने लगता है । वह चबूतरे से उठ खड़ा हुआ है और दीवार के पीछे सटकर सब कुछ सुनने लगा है । उसे न तो दमयन्ती देख पा रही है और न हैदर । पता नहीं क्या बात है कि सुनते हुए उसके चेहरे पर बीसियों किस्म के भाव उभरते हैं । कभी एक हाथ से अपने सीने को ज़ोरों से मसलने लगता है, गला दबा कर 'आह' भरता है और कभी गुस्से से भरा नज़र आता है ।

यह सब कुछ नहीं डायरेक्टर की माया है ।

परदे का उलट-फेर ! फिर दमयन्ती और हैदर वही बैठक वही लाइट वही सेट वही सेटिंग वही सिचुएशन ।

दमयन्ती की चूड़ियों में कोयले की धूल लिपटी नज़र आती है । वह उस छिपाने का यत्न करती हुई कहती है आप जैसे लोग ही कलाकारों के पांवों में जूते डालते हैं वरना कोई इनकी परवाह नहीं करता । पूरा समाज कलाकारों को एक ऐसे चौकीदार के रूप में देखना चाहता है जो आवाज़ तो गली-गली लगाए, मगर किसी से एक प्याली चाय की भी आशा न करे । वह चाय नहीं मांग कर अपना स्वाभिमान बचाता है और खुद उसे चाय न देकर देहात में मंगवाये गए भी मजबूरी इज्जत खत्म कर देते हैं ।

आपको याद होगा ही कि दर्शकों ने अपनी-अपनी बांहों पर एक-एक बिल्ला लगा रखा है जिस पर लिखा है—'हम युद्ध कला के प्यासे हैं ।' फ़ौरन दमयन्ती के डायलॉग सुन कर एक बालक अपनी बगल वाले के सिर को झकझोर कर कहता है—"युद्ध यह सब तो बड़ा ही अननैचुरल है । दमयन्ती के संवाद में इतना तीखापन कुछ जंच नहीं रहा है । बहुत आवेग है उसके वचन में ।

और, जिसका सिर झकझोरा गया वह उसके कान में मुंह सटाकर—

कहता है—"यह ड्रामा है, चेले, कहानी या नॉवेल नही। ड्रामे का डायलॉग कहानी और उपन्यास के मुकाबले ज्यादा गतिशील, ज्यादा सेनसिटिव और ज्यादा चोट करने वाला होता है।"

हैदर कहता है, "ऐसे लोगो के नाम पर लानत फेंकिए'' हम दोनो तो एकसाथ हाई स्कूल मे तीन साल रहे। इन तीन सालो मे मैंने दिवाकर साहब को नाश्ते की छुट्टी मे कम-से-कम बारह वार अपने पैसो से आइस-क्रीम चटाई होगी, छ वार मूगफली और तीन वार सोहनपापडी सोहनपापडीवालो पर खुदा की गाज गिरे, अब भी सोहनपापडी वैसी ही बनती है ? लाहौल विला कूवत !"

दमयन्ती वोल पडती हैं, "वडे भुलक्कड हैं ये। आज तक मुझे यह सब नही वतलाया।"

हैदर कुछ स्मरण करता है, फिर वोलता है, "आह ! भला ये सब वातें भी वतलाने की हैं ? मगर, मैं तो गोया वहक गया हू। दिवाकर भाई से मिलवाइए न। शादी के चौदह साल वाद मेरे वॉस की वीवी की गोद भरी है। खुशिया मनाई जाने वाली हैं। हमने उनकी कोठी के अहाते मे कुछ गाने, वजाने और नाचने का प्रोग्राम तय कर रखा है। अपने साहव मे जव मैंने वतलाया कि दिवाकर मलिक मेरे छुटपन के दोस्त हैं, तो उनको यकीन ही नही हुआ। फिर यह भी वोल पडे कि ऐसे फक्शन मे दिवाकर मलिक जैसा डासर तो आने से रहा। उन्होने गोया मुझे ललकार दिया। मैंने भी दवी जुवान से कहा—"अच्छा, तो सर, चैलेंज मजूर।"

दमयन्ती कहती हैं, "वहुत अच्छा किया आपने। मैंने इन्हे सैकडो वार कहा है—आदमी को लचीला होना चाहिए। तूफान के साथ चलने वाला गिर पडता है। जव तूफान चलने लगा हो, तव रुक जाना चाहिए। और हा, काम करके कुछ प्राप्त करने मे भला क्या लाज ? इस वक्त हमे पैसो की सख्त जरूरत है। कितना देने का तय किया है आप लोगो ने ?"

हैदर वेचारा जैसे आसमान से गिरता है। कहता है, "ऐसा कह कर तो आप हिमालय को धक्के दे रही हैं। दिवाकर भाई यह सव सुनेंगे, तो उनको कितना वुरा लगेगा, खुदा ही वतला सकता है। आपने उनको मामूली आर्टिस्ट समझ रखा है क्या ? ऐसी हस्तिया शोहरत का कफन

लगते पीन होती है और उसी कफ़ा के साथ कब में उतर जाती है। फिर अब मेरी ज़िम्मेदारी में यह फ़रमान हो रहा है दिवाकर भाई को सौ-पचास का नोट पकड़ाया भी जाए, तो वह उसे फ़ौरन फेंक देंगे।

"मैं कहती हूं नहीं फेंकेंगे हर्गिज़ नहीं फेंकेंगे। हाथ लगाते हैं। यहीं चिन्ता में रहते हैं।

सुनकर हैदर सुझाव देता है 'हाथ तो तभी भरेगा जब वह [illegible] नौकरी से लग जाएं। और हां लग भी जाना चाहिए। दिन भर नौकरी करो सुबह-शाम नाचो-गाओ कौन रोकता है? बहरहाल इस उम्र में उन्हें सरकारी नौकरी मिलने से तो रही किसी प्राइवेट [illegible] की तलाश कर अच्छा सुनिए, स्टेशन पर साइकिलों की एक बहुत बड़ी दुकान है। [illegible] मालिक मेरा दोस्त है। मैं उससे इनके लिए [illegible] जाता हूं। सुबह आठ बजे जाएंगे और शाम आठ बजे लौट आएंगे। [illegible] है [illegible] काम लेता है मगर पैसे मुंह पर फेंकता है।

'कितने पैसे मिलेंगे?

"अजी डेढ़ सौ रुपये माहवार से क्या कम देगा?

"आप अपने आफ़िस में कितना पाते हैं, हैदर भाई?

हैदर बीस [illegible] से बतलाता है [illegible] [illegible]-टैक्स प्राविडेण्ट फ़ण्ड [illegible] [illegible] मिलते हैं।

दमयन्ती उच्छ्वास छोड़ कर कहती है [illegible] है।

हैदर [illegible] अपनी [illegible] [illegible] कहता है "अच्छा, अब उनका [illegible] [illegible] फ़र्मिनिस्ट की ज़रूरत नहीं। मुझे कुछ नहीं [illegible]। [illegible] तो [illegible] एक [illegible] काफ़ी न [illegible]।"

दमयन्ती कुछ [illegible] नहीं। [illegible] रहती है और [illegible] [illegible] [illegible] है। [illegible] [illegible] और [illegible] [illegible] हिम्मत [illegible] की [illegible]।

"[illegible]?'

" • ।" दमयन्ती मौन ही रहती है।

घबडा कर हैदर पूछता है, "क्या दिवाकर भाई घर मे नही है?"

उत्तर मे दमयन्ती का सिर धीरे से दो बार दाए-बाए हिल जाता है—बस। हैदर अपने सूट की क्रीज़ पर निगाह डालता हुआ उठ खडा होता है और बाहर निकल जाने का उपक्रम करता है। दमयन्ती एक कदम पीछे हट जाती है। हैदर दरवाज़े की ओर बढता है और कहता है, "भई वाह! आपने तो मुझे खूब मुग़ालते मे रखा।"

दमयन्ती अब भी कुछ नही बोलती।

"ज़रा बोलिए तो सही, उनसे फिर कब मुलाकात हो सकती है? मैं फिर आने की कोशिश करूगा।" हैदर कहता है। परन्तु, ऐसा प्रतीत होता है कि इस स्थिति मे वह बेहद झुझला उठा है। निराशा और क्रोध, दोनो के भाव उसके चेहरे पर एकसाथ देखे जा सकते हैं। फ्रण्ट लाइट इस सिचुएशन मे जान डाल रही है।

दमयन्ती का मौन नही टूटता। वह बहुत ही धीरे-धीरे पीछे की ओर खिसकती जा रही है। हैदर रुक कर उत्तर की प्रतीक्षा करता है, फिर दमयन्ती के कुछ न बोलने पर तमक कर बाहर निकल जाता है। परदा गिरता है। लाइट बुझ जाती है।

सरदार अमीरसिंह चाहे और काम भले ही भूल जाए, मगर जब तक यहाँ रहता है गुरुद्वारे में मत्था टेकना नहीं भूलता। भजन-कीर्तन में भी शामिल होता है और उसे देख कर, आसानी से कोई यह नहीं समझता कि वह ट्रक ड्राइवर है। उसकी बातचीत में कहीं भी ड्राइवरपन नजर नहीं आता। कायदे से बैठना कायदे से उठना और कायदे से बातें करना खूब जानता है। गुरुद्वारे से सटी जो सड़कनुमा गली है उसकी दूसरी ओर उसने दो कमरों वाला एक छोटा-सा घर किराये पर ले रखा है। इस मकान के मालिक भी कोई सरदारजी ही हैं। पहले इसमें एक मारवाड़ी परिवार रहता था। दो भाई माँ और एक बहन। ये दोनों भाई यहीं मेन रोड पर गुड़ भी बेचा करते थे। सरदारजी ने उन्हें किसी तरह उजाड़ कर अमीरसिंह को बसा दिया। तसल्ली हुई कि नया किरायेदार आ गया और वह सरदार है।

गुरुद्वारे में स्कूल तो चल ही रहा था और रमोला के प्रयत्न से कल्याणी को नौकरी भी मिल गई थी। मुख्य गुरुद्वारे के प्रांगण में जो अत्यन्त साफ-सुथरा और पवित्र रहता था कोई-न-कोई उत्सव होता रहता। देश के कोने-कोने से सिख तीर्थयात्री बड़े गुरुद्वारे का दर्शन करने आते तो इस गुरुद्वारे में भी पधारते थे। इन लोगों की छोटी टूरिस्ट बसें अक्सर नजर आया करतीं।

नृत्य का सामान अभी नहीं आया था इसलिए कल्याणी बच्चों को मात्र हारमोनियम के सहारे पक्के रागों में बंधे भजन गाना ही सिखलाने लगी थी। बच्चियाँ अच्छे खूब रुचि लेते थे। कल्याणी प्रेम से काम लेती थी ताड़ना से नहीं। जब कभी बाहर से आए हुए किसी ऐसे विद्वान का भाषण होता जो सिख धर्म और दर्शन में अपनी गहरी पैठ रखता था तो रमोला और कल्याणी भी बड़े प्रेम से भाषण सुनतीं। कुछ ही महीनों में इन्हें सिख गुरुओं के आदर्श जीवन के विषय में बहुत सारी बातों की ज.।

गई थी। ऐसे ही मौके पर किसी शाम सरदार अमीरसिंह की निगाहे कल्याणी की निगाहो से जा टकरायी।

अमीरसिंह तो जैसे वावला हो उठा। उसके दिल ने कहा—'हाय, यही तो है मेरे तसव्वुर की मलका!'

जवानी मे वहुत सारे अनाडीपन होते है। मगर, सवसे वडा अनाडीपन यह होता है कि हर जवान दिल शारीरिक आकर्षण को मुहव्वत का बुखार समभने लगता है। शरीर पाने की वेचैनी को वह पाक मुहव्वत की तडपन समभने लगता है और यह मानने को हर्गिज तैयार नही होता कि उसकी इस उफान मारती हुई मुहव्वत मे दो फी सदी भी मिलावट है। पचास कदम दूर वैठी हुई कल्याणी ने जैसे अमीरसिंह को इशारे से कह दिया, 'अमीर, मैं तेरी सोहिणी हू। नजरें न चुरा। आ, हम दो रूह मिलकर एक हो जाए।'

कहते हैं, प्रेम अन्धा होता है। पर, उस वक्त उसकी आखो मे शायद सौ सूरज की रोशनी आ जाती है, जव एक प्रेमी प्रेमिका को या प्रेमिका प्रेमी की तलाश मे निकल पडती है। सरदार अमीरसिंह ट्रक लेकर कही दूरदराज जाने वाला था। मगर, अव रुक गया। उसने रमोला के साथ कल्याणी को गुरुद्वारेवाले स्कूल मे आते-जाते कई वार देखा था। पर, आज तक न तो नजरें मिली थी, न दिल की यह हालत हुई थी।

उसने पडोस की एक आठ साल की लडकी को ढूढ निकाला और उसे लेकर स्कूल पहुच गया। वह कल्याणी से इस लडकी के ही मुतल्लिक मिलना चाहता था। इस समय उसने एक अच्छा सूट पहन रखा था और उसकी पगडी जैसे कमाल कर रही थी। उसने कोट के ऊपर वाली जेव मे एक वढिया फाउण्टेन पेन खोस रखा था और उसके रूमाल से एक प्रकार की मीठी-मादक सुगन्ध निकल रही थी।

वह पूर्व की ओर से दक्षिण की ओर चल कर, पश्चिम की ओर मुडा, जिधर सगीत-नृत्य सिखलाया जाता था। यह एक वढिया हाल था और यही उसकी भेंट कल्याणी से हुई। वह हारमोनियम पर दस-पन्द्रह वच्चे-वच्चियो को कोई 'सवद' गाना सिखला रही थी। सवदो का एक अच्छा सग्रह उसे गुरुद्वारा प्रवन्धक कमेटी के प्रेसीडेण्ट साहव ने खुद दिया था और

इशारा किया था कि बच्चों को आशिकाना प्रकार के गीत हरगिज न सिखलाए जाएं। उनकी बातों से यह भी मालूम हुआ कि वह थोड़ी-बहुत पैठ संगीत में भी रखते हैं। उन्होंने कहा था 'बहुत सारे भजन राग रागिनियों में बंधे हैं। उनका रियाज करके भी बच्चे अच्छी आवाज के हकदार बन सकते हैं।

"जी हां ऐसा ही करूंगी। कल्याणी ने कहा था "मेरी ट्रेनिंग तो तुलसीदास के विनय विनय-पदों से शुरू हुई थी।"

सरदार अमीरसिंह उस हाल के दरवाजे पर आकर खड़ा हो रहा। आठ साल की बच्ची सलवार और कुरता पहने उससे सटी खड़ी थी। पास आकर कल्याणी ने पूछा था 'आप किस सिलसिले में आए हैं?

'यह कुड़ी भजन-कीर्तन सीखेगी।"

कुड़ी माने लड़की।

मुण्डा माने लड़का।

इसके अलावा पंजाबी बोली के पचासों शब्दों के अर्थ कल्याणी जान गई थी। उसे कोई परेशानी नहीं हुई। उसने पूछा, 'यह यहां पढ़ती है?"

"नहीं।"

कल्याणी ने कहा "यहां स्कूल में जो लड़की पढ़ती है उसे ही संगीत सिखलाया जाता है। क्या इसके मां-बाप इसे पढ़ाना नहीं चाहते?

"वे तो नहीं चाहते। मगर, जानती हैं दोस्त सगे भाई से बढ़कर होता है।"

"मतलब?"

सरदार अमीरसिंह ने कहा, 'इसका बाप मेरा दोस्त है। हम एक थाल में रोटियां खाते हैं। मैं चाहता था यह लड़की कुछ बने। इसकी आवाज बड़ी प्यारी है। मैं नहीं चाहता कि दुकान पर बैठकर यह पापड़ बेचने में महारत हासिल करे। इसका बाप इसकी खूबियों को नहीं पहचानता।'

कल्याणी इस बार सरदार अमीरसिंह की आंखों में आंखें डाल हैं। फिर कहती है 'ठीक है, आप इस पहल स्कूल में दाखिला। उस ओर चले जाइए। जसविन्दर कौर हेड टीचर हैं।"

"वेहतर।" कहकर अमीरसिंह ने, जिस ओर से आया था, उधर मुडना चाहा। फिर उसने वेहद मासूम आवाज़ मे कल्याणी से पूछ लिया, "आपसे कव मिलना होगा ?"

कल्याणी ने जैसे अनजाने ही उसका दिल तोड दिया। कहा, "अव मुझसे मिलना कोई ज़रूरी नही है। दाखिला लेने के वाद यह लडकी खुद इस क्लास मे आने लगेगी।"

"मगर जो मिल लू, तो कोई हर्ज है ?"

कल्याणी का उत्तर था, "देखा जाएगा ।"

देखा जाएगा क्या देखा जाएगा ? अमीरसिंह इन दो लफ्ज़ो के ढेर सारे मायने लगाता हुआ चला गया।

दो-तीन रोज़ अमीरसिंह छुट्टी के समय वाहर गेट के पास कल्याणी को नज़र आता रहा और उसे वडे अदव से नमस्ते करता रहा। फिर वह ट्रक लेकर अमृतसर चला गया। जा री दुनिया ! मुहव्वत के रास्ते मे रोटी का सवाल भी क्या गुल खिलाता है। नमस्ते का उत्तर कल्याणी ने हर वार मुस्कराकर दिया था और उसकी हर मुस्कराहट अमीरसिंह को उसके करीव लाती गई थी। परन्तु, कल्याणी के अनजाने मे यह सव हो रहा था। इस स्कूल मे वहुत सारे सरदार जी आते रहते हैं। कोई वच्चे को दाखिल कराता है, तो कोई वच्ची को। इसी तरह कव और कौन-कौन कौर आती थीं, हिसाव लगाना मुश्किल था। गुरुद्वारे की सीढी पर जिसे रोज़-रोज़ मत्था टेकना नसीव हो, भला उससे वडभागी कौन सरदार और कौन कौर होगी ? सरदारो की वीविया वच्चे-वच्चियो को छोडने या लिवा ले जाने आती, तो मत्था टेकना कभी नहीं भूलती थी।

कल की सुवह चार वजे ट्रक लेकर अमीरसिंह को यह शहर कई दिनो के लिए छोड देना था। यह तो एक सयोग ही था कि आज की शाम कल्याणी उसे पास की उस दुकान पर मिल गई, जहा प्लास्टिक की चूडिया खास तौर से विका करती थीं। अमीरसिंह ने पूछा, "कहिए, लडकी कुछ सीख रही है ? आवाज़ कैसी है ?"

कल्याणी ने कहा, "हा, सीख रही है। आवाज़ भी अच्छी है।"

अमीरसिंह जैसे एकाएक वोल पडा, "मैं भी कल वाहर जा रहा हू।

शायद पन्द्रह रोज बाद लौटूं।"

"अच्छा।" कहकर कल्याणी ने एक बार अमीरसिंह को जी भर कर देखा था। इसके बाद चूड़ियों की डिजाइन पसन्द करने लगी थी।

लेकिन आज कल्याणी को भी जैसे कुछ हो गया। आगे बढ़ जाने पर भी लगा अमीर उसके पास ही खड़ा है। दुकान-मालिक एक युवा सरदार था। बूढ़ा होता तो शायद किसी बहाने कल्याणी पूछ बैठती—'यह कौन है? और, तब बूढ़ा सरदार एक-दो वाक्य में कुछ बतला देता। मगर, सवाल सिर्फ इतना ही नहीं था कि यह कौन है? इसके बाद अन्य सवाल और भी जुड़े हुए थे जो होठों से बाहर नहीं निकल पाते

'यह कौन है जो रेत के ऊपर सावन का बादल बन कर गुजर गया?

इंजन स्टार्ट, स्पीडोमीटर, बायस!

स्टियरिंग ह्वील क्लच एक्सलरेटर!!

भीड़-भड़ाका हॉर्न और 'हटो-बचो की आवाजें!!!

यह सब कुछ एक ओर और कल्याणी का एक शब्द 'अच्छा' एक ओर। ट्रक के स्टियरिंग ह्वील की थरथराहट के साथ सरदार अमीरसिंह का दिल भी थरथरा रहा है—उस सलवार, कुरता और ओढ़नी ने मन [illegible] देने भर की देर है, बस्ती फौरन चटक पड़ेगी। शरमा कर वह [illegible] 'अमीरसिंह, तू बड़ा वो है' ।

अमीरसिंह पचास से लौट कर आता है तो फिर [illegible] मिलता है। रमोला बीबी के पेट में कोई दाग हो गया है। [illegible] दाखिल है। शायद आपरेशन होगा। डाक्टरों का इन्तजार [illegible], सरदार अमीरसिंह सब पता लगा चुका है।

दुकान का मुख्य द्वार मन रोड की ओर खुलता है। [illegible] की मार है। वैसे एक अच्छा-खासा रास्ता पूरब की ओर भी है। [illegible] छोटी-छोटी कई दुकानें हैं। उन्हीं दुकानों में से [illegible] पसन्द करते समय उस दिन कल्याणी का अमीरसिंह [illegible]।

हर शहर के मन पर यह मन-गहन रहती है। [illegible] पहले थी। बसन्त का मौसम! सभी पार कर गए थे। [illegible]

मे अभी-अभी छुट्टी हुई थी और लडके-लडकिया उत्तर और पूर्व वाले फाटको से भागते-कूदते, उछलते निकल रहे थे। मेन रोड पर सवारियो की भीड देखते ही वन रही है।

आज कल्याणी अपने को कुछ ज्यादा थकी हुई पा रही है। इच्छा होती है कि रिक्शे से घर लौटे। पर, मन आगे वढता है और कदम पीछे हटता जा रहा है। नब्बे रुपये की नौकरी है। वह भी स्थायी नही। माहौल तो यह है कि छ-सात टीचरो मे जो दो गैरसिख टीचर हैं—रमोला और कल्याणी—अपने को स्थायी समझ ही नही सकती। लगता है, इन दोनों के सिर पर कोई दो अनजानी कौर लटक रही हैं। इधर कल्याणी ने सुना है, हरविन्दर कौर की भानजी लुधियाने से आई है।अभी उसका व्याह नही हुआ है। वह हिन्दी की प्रभाकर परीक्षा पास है और सगीत मे उसने तीन साल की पढाई पूरी कर ली है।

कही रोटियो की छीना-झपटी न हो जाए ?

उसे नौकरी भी मिल सकती है, और शादी की वातचीत तो चल ही रही होगी। मगर, कल्याणी का क्या होगा ?

कल्याणी जव पहला वेतन लेकर घर गई, तो दिवाकर मलिक किसी काम से वाहर ही खडे थे। कल्याणी ने कहा, "वावूजी, इधर आइए।"

"क्या है, वेटी ?"

"आइए न !"

और, जव दिवाकर मलिक वैठक मे आ गए, तो उसने उनके आगे दस-दस रुपये के नौ नोट वढाते हुए कहा, "यह रहे नब्बे रुपये। एक महीने का ।"

दिवाकर मलिक ने नोटो को देखते हुए कहा, "जाओ, अपनी मा को दे दो।"

"क्यो, आप नही लेंगे ?"

"विटिया के लिए मा और वाप दोनो वरावर होते हैं। जाओ, मा को दे दो।"

कल्याणी समझ नही पाई कि यह कहते हुए उसके पिता ने क्यो वडे गौर से उसके मुखडे को देखा था और क्यो उनके नेत्रो ने क्षण-भर मे आसू

उछाल दिए थे। वह चुपचाप आँगन की ओर बढ़ गई।

पहाड़पुर स्टेट के बाबू साहब के पिता नर्तकों और गायकों का बड़ा सम्मान करते थे। एक बार उनकी भी इच्छा दिवाकर मलिक को अपने यहाँ नौकरी देने की हुई थी। दिवाकर मलिक ने दूसरे से अस्वीकारात्मक उत्तर भिजवा दिया था। भला यह भी कोई बात है कि वह जब चाहें तब उनके आगे माथा जाए? उनके रिश्ते भी तो रजवाड़ों में ही हैं। ये लोग बाँधे रहते हैं। क्या पता उन्हें खुश करने के लिए नाचने को कहा जाए? अब उनके सुपुत्र स्टेट के मालिक हैं। इन्होंने भी चाहा था कि दिवाकर मलिक उनकी पनाह कुबूल करें और दिवाकर मलिक ने फिर इस मौके को ठुकरा दिया। वसन्तपंचमी को उनके यहाँ बड़ी धूम से रास रंग मचता है। नामक नर्तक गायक आते हैं। सभी अपनी-अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते हैं और सन्तोषजनक पुरस्कार प्राप्त कर घर लौटते हैं। हर साल की तरह इस साल भी वसन्त का मौसम आया था। दिवाकर मलिक का हर वसन्त पंचमी के अवसर पर बाबू साहब बुलाते थे कुछ धनधान्य भी अर्पित करते थे। इस बार भी दिवाकर मलिक वहाँ जाने की तैयारी में थे। गुस्ल का अपना सारा सामान महफूज और चौकस—पहाड़पुर जाने के लिए बस इतने रोज रह जाएँगे। वहाँ से इतने रुपये तो मिल ही जाएँगे कि दो-तीन महीने किसी बात की चिन्ता नहीं रहेगी। कल्याणी जो वेतन लाएगी वह उसे ही देकर कहेंगे 'बेटी इससे तुम अपने लिए कुछ खरीद लो। हाँ कमाकर से आई हो न, मुझे पान-सुपारी के लिए एक रुपया दे दो। तुम्हारा भी मन रह जाए कि अपनी कमाई से पिताजी को कुछ दिया।

लेकिन ऐसा हो कहाँ पाया? बेहया बनकर कहना पड़ा 'जाओ अपनी माँ को दे दो।" पुत्री की कमाई से घर में राशन आएगा न! दमयन्ती हिसाब बिठाएगी कि सब रुपये में क्या-क्या और कितना आ सकता है।

दिवाकर मलिक जैसे जिन्दा ही मर गए।

पहाड़पुर स्टेट से इस साल निमन्त्रण नहीं आया। आधा माघ बीतने को आया। अमावस्या तक यह हाल हो गया कि नजर पड़ते ही डाकिये

रोककर दिवाकर मलिक पूछते, "मेरे नाम कोई चिट्ठी है ?"

"नही ।"

"देखिए, एक लिफाफा होगा ।"

"नही है, मलिक जी ।"

"ज़रा देखिए न । पहाडपुर स्टेट से पत्र आने वाला है ।"

लाचार होकर डाकिया वहुत सारी चिट्ठियो के वीच ढूढने लगता है ।

"पीले रग का लिफाफा होगा । हर साल वसन्तोत्सव का निमन्त्रण 'पीले लिफाफे मे ही आता है ।"

और, थककर डाकिया होठ विचका देता है ।

दिवाकर मलिक देखते रह जाते हैं । डाकिया आगे वढ जाता है । वैठक मे आकर वालकृष्ण की मूरत के पास चारपाई पर हताश होकर यू वैठ जाते हैं, जैसे हसते-हसते किसी ने सारी खुशिया छीन ली हो । उन्हे क्या पता कि किसी खुशामदी मुसाहिव ने वावू साहव के कान मे कह दिया था, "यह आदमी महाघमण्डी है । याद है न, श्रीमान जी ने दो-दो वार दरवार मे नौकरी कर लेने को कहलवाया, मगर वह अपनी शान मे ˜ तक नही करने आया । इमके वदले आप खेलाडीलाल को इज़्ज़त शाए । राग जयजयवन्ती पर तो वह सगीत की त्रिवेणी वहा देता है—आडा चौताला चौदह मात्रा । वाप रे वाप, श्रीमानजी एक वार उसका नाच देख लें, तो कहे कि हा, अपने इलाके मे एक दूसरा रतन भी है ।" फिर वह चौताला चौदह मात्राओ मे वधे राग जयजयवन्ती की दो पक्तिया गुनगुनाया भी था

'नाचत गति गिरधर गोपाल ।

छम-छम-छम छवि न्यारी ।'

और, वावू साहव ने फैसला दिया, "ठीक है, तुम दिवाकर मलिक की कमी पूरी करने के लिए खेलाडीलाल को निमन्त्रण-पत्र भिजवाओ ।"

खेलाडीलाल मुसाहिव का अपना आदमी था । तय पहले ही हो चुका था—विदाई मे दस आने खेलाडीलाल लेगा और छ आने मुसाहिव ।

कल्याणी सडक पर आकर खडी हो गई है । आज रिक्शे से ही घर

लौट चलें तो क्या हर्ज है? मगर, सिर्फ आज भर। रोज रोज ऐसा नहीं करेगी। इतना सुकुमार बनने से काम नहीं चलता।

बहुत भीड़ है। कोई रिक्शा खाली नजर ही नहीं आता। कल्याणी सोचती है—भला कब तक खड़ी रहे! अब धीरे-धीरे चलना चाहिए। तभी जैसे अमीरसिंह उसके लिए फरिश्ता बनकर आ जाता है।

"आप घर जाना चाहती हैं?"

"हां घर ही ।"

"क्या रिक्शे की तलाश में हैं?"

"जी ।"

अमीरसिंह अक्ल से काम लेता है। कहता है, "यहां तो जरा मुश्किल है। दो-चार सौ कदम उस ओर बढ़ आइए। कोई-न-कोई रिक्शा मिल ही जाएगा। उधर यहां जैसी भीड़ नहीं है।

कल्याणी कुछ नहीं बोलती। चल पड़ती है। सोचती है—रिक्शा नहीं भी मिला तो घर जाने का रास्ता उधर से ही है। पैदल चलती चली जाएगी।

और सरदार अमीरसिंह आगे-पीछे होता हुआ एक प्रकार से उसके साथ ही हो लिया। कल्याणी बार-बार उन गलियों में देखती। अब उसकी समझ में यह राज आ गया।

"रिक्शा आगे मिल जाएगा।"

"अच्छा ।"

"मैं इसी गली में रहता हूं।"

"अच्छा।

"वह जो अमृतसरी पापड़ वाले सरदार जी हैं न…।"

"मैं नहीं जानती।"

"खैर, एक छोटा-सा बच्चा भी बता देगा कि उनकी दुकान कौन सी है।"

"अच्छा ।"

"उनकी दुकान के सामने से ही [illegible] है। गली में चलने पर एक मकान के बाद दूसरा [illegible]

का दरवाजा है।"

कल्याणी ने इस पर कुछ नही कहा।

चार-पाच कदम बढने पर अमीरसिह कहने लगा, "पहले साथ मे मेरी मा और छोटा भाई रहता था। अब दोनो मे से कोई साथ नही। अकेला रहता हू।"

कल्याणी लगातार चुप रही।

सरदार अमीरसिह का ख्याल था कि अगर इसे ये सारी बातें बुरी लगती, तो यह कुछ दूसरा रुख अपनाती। मगर, वह तो चुपचाप सब कुछ सुनती जा रही थी। अमीरसिह ठाट-बाट से काफी आकर्षक लग रहा था। लोगो की भीड तो घटती-बढती रहती है। कुछ कदम आगे चलने पर इन दोनो के पास लगा, भीड कतई है ही नही। अमीरसिह ने कल्याणी के एकदम पास मे चलते हुए जैसे अपने दिल को निकालकर उसकी हथेलियो पर रख दिया। फुसफुसा कर कहा, "पजाब निकल जाना पडा। मगर मन बेहद उदास रहा। आपको भूलना खुदा को भूलने जैसा मुश्किल जान पड रहा था।"

कल्याणी ने जब इतना सुना, तो लगा, इस सरदार ने उसके ललाट, बालो और गालो को बडे प्यार से सहला दिया। फिर भी उसने धीमे स्वर मे पूछ लिया, "मगर, आप मुझे याद ही क्यो करने लगे?"

"भई, इस क्यो का जवाब मेरे पास नही है।"

"तो फिर किसके पास है? आप मेरे साथ-साथ चलते आ रहे हैं, देखने वाले क्या कहेगे?"

"चाहे वे जो कह लें, मेरे दर्द मे साझीदार तो हर्गिज न होंगे।"

"खैर, इन बातो से मेरा क्या वास्ता!" कल्याणी बोली।

मगर, यह वास्ता हुआ। सरदार अमीरसिह को अदावत की जगह मुहब्बत मिली। दुत्कार की जगह पुचकार मिला। दोनों एक-दूसरे के लिए कभी न खत्म होने वाली गजल की बन्दिश बन गए। अकेले मे सरदार अमीरसिह गुनगुनाने लगा

'शाला जवानिया माणे, आखा ना मोडी पी लैं, पी लैं।
अखिया विच अखिया पाके, तोबा नु फाई लाके,
पिघली हुई जन्नत पी लैं, कलिया दी अज़मत पीलैं,

पी सै दो-चार दहाड़ पी सै पी सै
पासा जवानिया मार्णे ।'

वक्त ने दोनों को एकदम से एक मोड़ पर ला कर खड़ा कर दिया। स्कूल को अब कल्याणी एक दिन के लिए नहीं छोड़ सकती थी। वह तो अमीर की हीर बन गई थी वह रांझा बन गया था। उनकी मुहब्बत को पंख लग गए और एक संध्या सरदार अमीरसिंह अपनी हीर को लेकर जालन्धर जाने वाली रेल में बैठ गया। रेल चल पड़ी।

12

वागेश्वरी को पुकार कर दमयन्ती ने कहा, "पूर्वी को झोला और सरसो के तेल वाली शीशी दे दे।"

"अच्छा।"

यह सब सुनते ही पूर्वी ने वायलिन उठा कर एक ओर रख दी। सोचा— अब मामान लाने जाना होगा, उठू। लेकिन क्षण-भर बीतते-न-बीतते उसका उत्साह एकदम ठण्डा पड गया। दुकानदार नज़र पडते ही कुछ यू देखता है, जैसे पूर्वी के रूप मे कोई प्रेतनी या चुडैल उसके सामने आ गई हो और उसे मौका मिलते ही खा जाएगी। वह एक ओर चुपचाप खडी रहती है और वह पूछता ही नही कि क्या चाहिए। बाप और दो बेटे मिल कर दुकान चलाते हैं। दुकान बडे मौके पर है, इसलिए ग्राहको की भीड इस कदर रहती है, गोया छिला हुआ पका आम पडा हो और उस पर ढेर सारी मक्खिया भिनभिना रही हो।

न जाने किस पण्डित से पूछ कर मा-बाप ने उसका नाम दमडीप्रसाद रखा था, जबकि वह लखपती था। चावल, दाल, तेल की आढत मे पहुचता, तो जुबान खोलते ही आढत के मालिक गद्दी पर से बोलते, "जयराम जी की, दमडी बाबू ! कहिए, चावल की कितनी बोरिया लदवा दू ? पजाब वाला गेहू और कानपुर वाली दाल आ गई है।"

दमडीप्रसाद कहता, "पहले भाव तो मालूम हो।"

"आपसे यही सब सुनना अच्छा नही लगता। हुक्म करते चलिए। वह देखिए, सामने बैलगाडी खडी है। मोल-तोल न कीजिए। हम कभी घाटे का सौदा नही दे सकते।"

"हा, सो तो है।"

फिर जब जो चीज़ शीघ्र उपलब्ध हो, उससे स्वागत।

मिठाइया, लस्सी, पकौडे, चाय, फल !

दमडीप्रसाद के बेटो के नाम जैसे सस्कृत-कोशो की महायता से रखे

गए हैं—राहुल राकेश नीलाभ । इनमें राहुल बीस साल का राकेश सोलह साल का और नीलाभ तेरह साल का है। ये तीनों अपने नाम का अर्थ बिलकुल नहीं जानते। दमड़ीप्रसाद उन्हें हांक लगाता है—अरे रहुलवा! अरे रकेसवा अरे निलभवा। वह यह भी नहीं जानता है कि दन्त्य स और तालव्य श में क्या अन्तर है। हां इतना वह अवश्य जानता है कि सूखे अकाल और महंगाई के दिन बनियों के लिए दूसरी-तीसरी तिजारी खरीदने के दिन होते हैं। साग भाजी की तरह वे आवश्यक खाद्य आपूर्ति विभाग के अफसरों को खरीदते हैं और सामान्य ग्राहकों के सामने गला फाड़कर कहते हैं—इस धन्धे में अब कोई बरकत नहीं रह गई। साथ बताते हैं बड़े व्यापारी सामान छिपाकर के रखते हैं और जनता हम छोटे छोटे लोगों को बदनाम करती है हमारे नाम गालियां निकालती है। मुझ बीस साल में तो इधर के रहते हैं न उधर के। इतने दिन पापड़ बेलने के बाद मैं तो यही समझ सका हूं कि सबसे अच्छा धंधा नौकरी है। नफा-नुकसान से कोई मतलब नहीं महीने की हर एक तारीख का चकाचक नोट!

मामा इस बेचारे को साल में दो-तीन बार मुश्किल से चकाचक नोटों के दर्शन होते हैं। तीनों बेटे महाजनी के काम में गुरु होने के लक्षण रखते हैं। सबसे छोटा वाला नीलाभ बसे तुतला कर बोलता है मगर अक्सर पैसे लौटाते समय ग्राहकों के हाथ पर खोटे सिक्के रखने से बाज नहीं आता। ऐसे ही होनहारों को देखकर मानना पड़ता है कि बांस की जड़ में बांस पनपता है और मछली के बच्चों को तैरना नहीं सिखलाना पड़ता है।

पूर्वी जब झोला और सरसों के तेल की शीशी लेकर बैठक पार करने लगी तो दमयन्ती ने जरा ऊंची आवाज में कहा "तेल की शीशी पूरी भरा लेना। वह अक्सर पूरी शीशी नहीं भरता। कहना यह भाभ किसी की शीशी है ही। इसमें कोई काट-कपट न करो।

'अच्छा' ।

पूर्वी बाहर निकलती है तो लगता है उस पर बर्फ की बारिश होने लगी। वही जाकर एक ओर खड़ा होना दुकानदार की उपेक्षादृष्टि का सामना करना। बड़ा चालू है दमड़ीप्रसाद। दिखाकर मलिक [illegible] ना नहीं लेता, मगर मीठे-मीठे उन्हें कोसना वह नहीं भूलता था।

डकार तक लेने को तैयार नही होते। कहता है—"आढत पर चवन्नी-भर का सामान हमे कोई उधार नही देता और यहा जो लोग उधार ले जाते हैं, उन्हे याद ही नहीं रहता कि पैसे देने चाहिए। आखिर हमारे पास भी तो कोई कारू का खजाना नही है। अब तो मैं महीनेवारी उधार लेने वालो के भी आगे हाथ जोडने वाला हू' ।"

उसकी यह अन्तिम घोषणा पूर्वी के कलेजे को दहला देने वाली होती है। कुछ मानव प्राणी ऐसे भी होते हैं, जो ज़िन्दा रहने के लिए ग्लानि और हीनता की जड मीचने मे ही अपने को निरापद और सुरक्षित समझते हैं और किसी तरह उनकी ज़िन्दगी कटती चली जाती है। इस अर्थ मे कभी-कभी वे इतने जड हो जाते हैं कि वे भूल ही जाते हैं कि ग्लानि क्या चीज़ है, हीनता क्या चीज़ है। किन्तु, पूर्वी ऐसे प्राणियो मे नही। इस छोटी उम्र मे वह बार-बार अपने से सवाल करती है कि आखिर इस स्थिति मे उबरने का रास्ता कौन-सा रास्ता हो सकता है ?

सम्भवत वह दमडीप्रसाद की दुकान पर पहुच गई होगी कि इधर बाहर मे घूम-फिर कर दिवाकर मलिक लौटे। प्रात सात बजे ही निकल गए थे। अब दस बजे रहे थे। दमयन्ती ने जाकर दरवाज़ा खोला, तो देखा, 'वह' न तो उदास हैं और न प्रसन्न। लगता है, होठ गीले करने-भर को कही से पानी मिल गया। पूछा, "आ गए ?"

"हा।" कहकर दिवाकर मलिक ने जिज्ञासा प्रकट की, "पूर्वी कहा है ?"

दमयन्ती बोली, "दमडी की दुकान मे चावल और तेल लाने गई है।"

"और वागेश्वरी ?"

"वह स्नान कर रही है।"

दिवाकर मलिक कुछ उत्साह-भरे स्वर मे बोले, "एक मित्र मे दस रुपये मिल गए हैं ?"

"किसने दिये ?"

"भई, यह तुम हमेशा पूछा करती हो।"

"तो क्या हुआ ?"

"सबके नाम क्या तुम जानती हो ? किसी ने दे दिए, काम चलने से

मतलब। आओ घर में चलो।"

"क्या बात है ?

दमयन्ती जिज्ञासा से भर उठीं। जब भी कहीं से कुछ अर्थप्राप्ति की आशा होती दिवाकर मलिक इसी टोन में बोलते और घर में जाकर सारी बातें तफसील से बतलाते। बड़ी निश्छलता से अपनी बातों में कुछ नमक-मिर्च भी लगा दिया करते, फलस्वरूप तत्क्षण श्रीमती के उदास मुखड़े पर आनन्द की लहरें खेलने लगती थीं।

शयनकक्ष में आ कर दिवाकर मलिक चारपाई पर बैठे रहे। दमयन्ती ने भी अपने लिए एक कुछ-आसनी खींच ली और पति के पैरों के पास बैठ रहीं। दिवाकर मलिक ने कुरते की दायीं जेब से दस रुपये का एक नोट निकालकर पत्नी के हाथ में देते हुए कहा 'मेरे वो दोस्त हैं न प्रकाश बाबू, तुमसे तो उनके बारे में कई बार' ।

दमयन्ती बोल पड़ी "हां-हां याद है।"

दिवाकर मलिक ने बतलाया "शिक्षा विभाग के मन्त्री हो गए।

"मन्त्री हो गए ?

दमयन्ती के इस प्रश्न ने दिवाकर मलिक को जैसे जरा ठहर जाने के लिए कहा। बोले, "हो नहीं गए, मगर कल-परसों तक हो जाएंगे। उनके ही घर से आ रहा हूं।

'तुम्हें कैसे मालूम ?

"अखबार में पढ़ा है।"

"होने दो ।

'ऐसे क्यों बोलती हो ? शिक्षा विभाग से मुझ जैसे आदमी का विभाग भी जुड़ा हुआ है।

'तुम्हारा कौन-सा विभाग हुआ ? दमयन्ती ने आश्चर्य से पूछा।

दिवाकर मलिक बोले "मुझ जैसे लोगों का विभाग होता है—ललित कला विभाग। इसमें लेखक गायक वादक और चित्रकार आते हैं। प्रकाश बाबू कह रहे थे कि वह लेखकों गायकों वादकों के लिए भी कुछ करेंगे। मुझे तो बड़ी खुशी हुई। बड़े दरियादिल इन्सान हैं प्रकाश बाबू।"

इसी बीच पूर्वी आ गई। उसके हाथ का झोला खाली था ।

की शीशी खाली थी। वह वरामदे मे आकर खडी हो रही। उसका चेहरा कुछ इस कदर रुआसा नज़र आ रहा था, गोया कही से पिटकर आई हो। उसके पैरो की आहट सुनकर दमयन्ती ने आवाज दी, "कौन है? वागेश्वरी? स्नान कर लिया?"

वदले मे पूर्वी वोली, "नही, मैं हू।"

"सामान ले आई? आओ, इधर आओ।"

चौखट को लाघते हुए पूर्वी ने कहा, "उसने लौटा दिया।"

"क्यो, क्या कहा?"

"अव उधार नही चलेगा। मलिक जी को कहना, पिछला वकाया फौरन से पेश्तर चुकता करे।"

सुनकर पति-पत्नी दोनो को धक्का लगा। दमयन्ती ने पूर्वी को दस रुपये का नोट देते हुए कहा, "लो ये रुपये। पैसे से ले आओ।"

पूर्वी ने नोट तो पकड लिया, मगर झोला और शीशी ज़मीन पर रख दी और आज पहली वार अवज्ञा-भरे स्वर मे कहा, "अव मैं नही जाऊगी।"

दिवाकर मलिक ने वडे प्यार से कहा, "चली जाओ, वेटी। तुम्ही तो मेरे हाथ-पाव हो। अव तो पैसे देकर सामान लेना है।"

"नही।"

"नही-नही क्यो कर रही है री?" दमयन्ती के स्वर मे तीखापन भर आया। वह पूर्वी की ओर इस प्रकार वढी, जैसे क्षण-भर वाद ही उसकी पिटाई कर देगी।

और पूर्वी ने जैसे ज़िद्द ठान ली। वह शायद आने वाले हर खतरे की चोट सहने के लिए वाहर से ही तैयार होकर आई थी। उसके गाल लाल हो आए। उसने ज़ोर देते हुए कहा, "नही जाऊगी, नही जाऊगी, नही जाऊगी।"

"और जो कोई दूसरा ले आवे, तो खाएगी?" दमयन्ती ने तनते हुए पूछा। पूर्वी ने फौरन जवाव दिया, "नही खाऊगी· ·· जा·· ।"

सट्-सट्-सट् सटाक्!

थप्पडो के चलने के साथ ही दमयन्ती का क्रोध उवल पडा। पूर्वी अकडकर खडी रही। कलाकार पिता से नही रहा गया। भीतर से दौडकर

बाहर निकल आए। बेटी के सिर को कलेजे से चिपकाया उसके सिर पर हाथ फेरने लगे। बोले 'मेरी रानी बिटिया पर हाथ न चलाओ।'

पता नहीं पूर्वी ने तब क्या सोचा। वह अपने आंसू पोंछती हुई झोला और शीशी उठाकर दमड़ीप्रसाद की दुकान की ओर लपकती हुई चल पड़ी।

13

कल्याणी किसकी हीर बन गई, इस सवाल का जवाब न तो दिवाकर मलिक के पास था और न दमयन्ती के पास। मुहल्लेवाले शुरू मे जरूर पता लगाने की कोशिश करते रहे, बाद मे वे भी शान्त पड गए। शान्त पड जाने का अर्थ यह नहीं कि उन्होंने किसी नैतिकता का परिचय दिया कि दूसरे के परिवार की जन्मपत्री भला क्यों पढी जाए, बल्कि दिवाकर मलिक चूंकि मुहल्ले वालो के घरेलू मामलो मे कभी दखल नहीं देते थे और भेंट मुलाकात हो जाने पर नपे-तुले शब्द बोला करते थे, अत ज्यादा छेडछाड़ करने का किसी ने साहस नहीं किया। मगर, कानाफूसी का प्राइवेट बन्द तो लोग चलाते ही रहते थे।

दिवाकर मलिक अपनी कमजोरियो से परिचित थे, इसलिए उन्होंने स्वय भी दर्द को पी लिया। पर, यह दर्द जड से समाप्त हो गया था, ऐसा नहीं कहा जा सकता। यदाकदा कल्याणी की याद कुरेद ही जाती। वैसे उनका भी यही विश्वास था कि कल्याणी ने किसी के हाथो मे अपना हाथ डाल दिया होगा और उसी के साथ कहीं चल पडी होगी। हा, दमयन्ती कभी-कभी इतना जरूर कह डालती, "तुमने चुपके-चुपके उसे स्कूल की नौकरी पकडा दी। यदि मैं जानती कि यह सब होगा, तो उसे एक दिन के लिए भी घर से बाहर न जाने देती।"

"और मैं जानता, तो भी उसे धक्के देकर भेज देता? जरा सोच समझ कर बोलो, भाई! मेरे लिए कल्याणी कोई छठी उगली नहीं थी, जो रहे या न रहे, कोई फर्क नहीं पडता।" दिवाकर मलिक कहते।

दमयन्ती को आभास हो जाता, पतिदेव को ठेस पहुंची है। बस झट स्थिति को सभालती, "मेरी इन छोटी-मोटी बातो को दिल मे न बिठाया करो। यह मत समझो कि मैं तुम पर दोषारोपण कर रही हू। तुम्हारा स्थान तो मैं सात जन्म मे नहीं ले सकती। हा, कभी-कभी हूक उठती है, उसे किस पर प्रकट करू? बस तुमसे ही उल्टी-सीधी बोल देती हू।"

और मनोमालिन्य का मटमैला धुआँ क्षण भर में छँट जाता।

इसी बीच दिवाकर मलिक से एक रात दमयन्ती ने कहा, "अपने दोस्तों के बीच जाते हो, वागेश्वरी के लिए वर की चर्चा क्यों नहीं चलाते? ज़माना तो ऐसा है नहीं कि किसी वर का पिता तुम्हारे नाम और गुणों को सुनकर खुद चाहेगा कि वागेश्वरी उसकी पुत्रवधू बने। दस मित्रों के कान में यह बात डालोगे, तो कोई एक तो कहीं देखेगा-सुनेगा। बेटी न किसी राजा के घर जाएगी, कोई मुसाहिब तो अपना द्वार खोलेगा ही। शादी ब्याह बिना चर्चा चलाए तय नहीं होता।"

पत्नी का कथन दिवाकर को ज़रा भी बुरा नहीं लगा। बोले, "ठीक कहती हो। लेकिन कई बार सोचता हूँ, हाथ खाली है। शादी-ब्याह ज़ुबानी तो तय होता नहीं। मान लो मन के लायक वर मिल जाए, फिर तो पैसों के अभाव में हाथ मलकर ही रह जाना पड़ेगा।"

"भगवान सबके मालिक हैं। जब कोई शुभ काम होना चाहता है तो दूसरे भी हाथ लगा देते हैं। भगवान खुद तो सामने आकर कुछ नहीं करते मगर दूसरों के हाथ से करा देते हैं।" दमयन्ती ने कहा।

दो बार भगवान का नाम सुनकर जाने क्यों दिवाकर मलिक एकाएक नास्तिक बन बैठे। कहने लगे, "देखो दमयन्ती, भगवान और ज्योतिषी—इन दोनों से मेरा दिल बहुत घबराता है। इन दोनों के चक्कर में न पड़ा जाए, यही अच्छा। भगवान की कल्पना मनुष्य ने की। मनुष्य उस कल्पना से मुक्ति भी पा सकता है। वह किसी के भाग पर कुछ नहीं करता। अपने ही किए सब होता है। आदमी पीड़ा भोगता है तो कहता है—भगवान किसी पाप का दण्ड दे रहे हैं। मगर पुरस्कार की बात भी न लो। मैंने दो-तीन बड़े-बड़े भगवद्भक्तों को देखा है कि ज़िन्दगी भर वे देवताओं के पीतल के आसन को धोते रहे, डलिया में पूजन-अर्पण की सामग्री लिए मन्दिरों की सीढ़ियाँ गिनते रहे। इनमें से किसी का जवान बेटा एक्सिडेंट में मारा गया, किसी के घर में आग लग गई, कोई खान-दान का मोहताज हो गया। एक महिला तो पूजा करने के लिए ही फूल तोड़ने गई और इस कदर गिरी कि मत पूछो। पता नहीं पहले तो प्लास्टर चढ़ा, बाद में उसकी एक टाँग ही काट दी गई। पता नहीं, भगवान छिप-

छिपा मुस्कराता रहा या रोता रहा। ये ज्योतिषी भी कुछ कम ज़ालिम नही होते। हरदम दोहरी बातें बोलते हैं। ताल ठोककर एक बात पर वे टिक नही सकते।"

सुनकर दमयन्ती ने कहा, "सुनो, मैं जानती हू कि भगवान से तुम डरते हो, मगर ये सारी बातें क्रोध मे बोल रहे हो। दिल जलने पर माताए अपने बच्चो तक को शाप दिया करती हैं, लेकिन क्या वे हृदय से चाहती हैं कि बच्चो के जीवन पर वे शाप फलीभूत हो? उद्धव के आने पर गोपिकाओ ने मुरलीधारी श्रीकृष्ण के प्रति कितनी कटु बातें कही थी, परन्तु क्या उन्होंने उन्हे हृदय से निकाल दिया? श्रीकृष्ण स्वय द्वारकाधीश और रुक्मिणी के पति बनकर राधा को भूल सके? सारे ससार का जो स्वामी है, उसे कुछ उलाहने भी सुनने ही पडते हैं। हम दु ख मे भटक भी तो जाते हैं।"

दिवाकर मलिक को जैसे किसी ने अधेरे से उठाकर उजाले मे बिठा दिया। बोले, "अच्छा देखो, मैं कल ही से शादी की चर्चा तेज़ करता हू। सबसे पहले चारु बाबू से ।"

"चाहे जिस बाबू से कहो, मुझे कोई एतराज़ नही। क्या पता, किसके बहाने यह यज्ञ प्रारम्भ हो और किसके सहारे पूरा हो जाए!" तब दमयन्ती ने कहा।

अभी कचहरी पूरी तरह नही खुली है। मगर, सभी मजिस्ट्रेटो और जजों के पेशकार आ गए है। घण्टा-भर लगेगा, तब कचहरी मे पूरी चहल-पहल छा जाएगी। वकालतखाने मे सारी कुर्सिया नही भरी हैं। काले कोट वालो मे से भी सब-के-सब नही आए हैं। पेडो और शेडो के नीचे बैठकर अर्ज़िया टाइप करने वाले आ गए हैं। उनमे से कुछ की मशीनें चलने लगी हैं। मुकदमेबाज़ो मे से कुछ आ गए हैं, कुछ आ ही रहे होंगे।

चारुचन्द्र जी ने कहा था, "कचहरी की इमारत तो दोमज़िला है, मगर सबजज नम्बर तीन नीचे ही बैठते हैं। पश्चिम ओर का दूसरा नम्बर इजलास। इनका ही पेशकार है मणिकान्त दुबे। सावला रग और अच्छी कद-काठी है। लोग अर्ज़िया थमा रहे होगे। किसी भी इजलास मे

हाकिम और पेशकार नहीं छिपते। आसपास खड़े हो जाइएगा। फिर हम लोग आगे सलाह करेंगे।

दिवाकर मलिक यहां छद्म रूप में आ गए हैं। मणिकान्त दुबे से कुछ बोलना-चालना नहीं है। शक्ल-सूरत देख लेनी है बस।

तो यही है मणिकान्त दुबे।

मुंशी आते हैं, खुद मुवक्किल आते हैं। अर्जियां पकड़ाते हैं और अर्जी के साथ कोई नया रुपया चला है कोई दो रुपए। कोई तीन रुपये और कोई पांच तक का नोट समास में भी नहीं हिचकता। मुवक्किलों की भाषा पेशकार समझता है और पेशकार की भाषा मुवक्किल। मगर, वकीलों के मुंशी भी एक ही चिड़ीमार होते हैं। कभी-कभी वे पेशकार को भी चूना लगा देते हैं। लम्बी तारीख डलवाने के लिए मुवक्किल से पांच रुपये वसूलते हैं और पेशकार साहब को दो रुपये थमाते हुए कहते हैं अब कोई महीने आगे की तारीख डालिए। मुवक्किल आज आया ही नहीं। यह दस्तूरी मैं अपनी जेब से दे रहा हूं। अभी पेशकार साहब मुवक्किल तो मुकदमा निपटने के बाद कभी दर्शन नहीं देते। हम लोगों को तो एक ही साथ मरना और एक ही साथ जीना है।

जज साहब के आते-आते मणिकान्त दुबे के खाते में जैसे रेशमी चादर ओढ़ ली। घण्टे-भर में उसने तीस-पैंतीस रुपए से कम जेब के हवाले नहीं किए होंगे। बरामदे में आकर वह एक बीड़ी सुलगाता है और बीड़ी खत्म होते ही अपनी मेज के पास मिसिल संभालने लगता है।

तो यही है मणिकान्त दुबे! दिवाकर मलिक ने देख ली उसकी सारी आमदनी—आगमभरी दूनी महायनी, घूसो फलेगी—चाट बाबू ने ठीक कहा था।

फुटलाइट जल रही थी। हज़ारो सम्भ्रान्त नागरिक दिवाकर मलिक का नृत्य देख रहे थे। लगता था, कोई पलकें गिराने को तैयार नही है। नृत्य का यह आयोजन राजभवन के पश्चिमी प्रागण मे किया गया था। नगर के गिनेचुने लोग दर्शक थे—बडे-बडे वकील, डाक्टर, लेखक, पत्रकार, मन्त्री। हल्ले-हुडदगे की कोई सम्भावना ही नही थी। माननीय राज्यपाल जी स्वय कई मन्त्रियों के साथ आगे बैठे हुए थे।

यहा आए कुल पाच माह हुए और नगर का प्राय हर बुद्धिजीवी जान गया कि इस बार जो सज्जन गवर्नर हो कर आए हैं, स्वय एक अच्छे कवि हैं और कवियो-कलाकारो का बडा सम्मान करते हैं। कवियो-कलाकारो से बातें करते समय वह 'गवर्नर' नही रह जाते और उन्हे विदा करते समय कहा करते हैं, "आप यह मत सोचें कि मैं आपसे कुछ अलग हू। गवर्नरी क्या है साहब ? यह तो एक नौकरी है। आपने अपने क्षेत्र मे महान साधना की है। मेरी गवर्नरी तो किसी भी समय जा सकती है, पर आपकी उपलब्धिया सदैव बरकरार रहेंगी। पुन दर्शन देने की कृपा करें।"

राज्यपाल जी स्वय नर्तक नही, पर नृत्यकला को समझने की तमीज़ रखते हैं। पेशे से राजनीति मे रहे हैं, पर हृदय कुछ और ही है। चाहते हैं, मुल्क के किसी भी कलाकार को रोटी की समस्या का सामना न करना पडे। ये रोटी की समस्याए सुलझाने लगेंगे, तो फिर साहित्य और कला के लिए समय कहा से दे पाएगे ? यह सरकार और समाज का दायित्व है कि इनके सरक्षण का दायित्व अपने ऊपर ले।

राजभवन का पूर्वी प्रागण भी विशाल है। अभी यहा सैकडो कारें खडी हैं। दस-बीस गार्ड इन कारो के चारो ओर घूम रहे है। उनके कन्धो से बन्दूकें लटक रही हैं। चारो ओर रोशनी ही रोशनी ! मगर जो भी आता है, पश्चिमी प्रागण की ओर ही भागता है। सन्तरी किसी को नही रोकते, क्योकि यहा आने वाले सभी आमन्त्रित हैं। सम्भ्रान्त हैं, सस्कृत हैं,

बुद्धिजीवी हैं। पचासों महिलाएं और युवतियां भी आई हैं। इनमें से कई नृत्य-गायन और वादन कला में दक्ष हैं।

मगर आ रे दिवाकर मलिक!

आज की इस महफ़िल का तू साक़ी बन गया है।

साक़ी क्या बन गया है खुदा बन गया है। तेरा स्वास्थ्य भीतर-ही-भीतर टूट रहा है तेरे दिल में एक ज्वालामुखी धधक रहा है और तू है कि इन सारे दर्शकों के बीच बसन्त का सर्वोत्कृष्ट आनन्द बांट रहा है।

दिवाकर मलिक का नृत्य थम रहा है। वह मौन होकर नाच रहे हैं। पैरों में बंधे घुंघरू ही दर्शकों से बातें कर रहे हैं

'झुम छ न न न न न न!

झुम झन न न न न!'

लाट साहब की बाईं ओर राज्य के शिक्षामन्त्री प्रकाश बाबू बैठ हुए हैं। लाट साहब की आंखें खुली-की-खुली रह जाती हैं। यह हाड़-मांस का बना हुआ एक अदना इन्सान दिवाकर मलिक है या साक्षात् भरत मुनि का बेटा?

ये तोड़े ये मुखड़े ये परन ये टुकड़े।

धकारान्त 'तामेई' का—

धिन ना।

कत तेटे धिमधिम नाकत

तेटे तिन कततग

तिनकत तातिन कततग।

टुकड़ा तामेई किटतक का—

धातिर किटतक

तिरकिट तकतिर किटतक

धुमा किटतक

तिरकिट तकतिर किटतक।

"हाय हाय!' लाट साहब पास बैठ [illegible]

कहने लगते हैं— 'कुछ नोट किया प्रकाश बाबू [illegible]

प्रान्त की कलाविभूति है। हय है—यह [illegible]

जिस मात्रे पर तवलची उगली उठा देता है, दिवाकर जी वही पर तिहाई मार कर मम पर आ जाते हैं। आपको मालूम है न कि तिहाइया आमतौर से वधी होती हैं ? हर मात्रे से भी तिहाइया वध सकती हैं, पर इस कदर नाच चल रहा है और यकायक आपने उगली उठाई और वही से टुकडा तैयार। यह तो लय पर असाधारण नियन्त्रण का परिचायक है ·देखिए, देखिए, उम नृत्य के जादूगर को ·।"

मगर, सव वेकार !

प्रकाश वावू उर्फ सूवे के शिक्षा मन्त्री मुस्कराकर रह गए।

यह आदमी शिक्षा और कला-सस्कृति मत्रालय का मन्त्री है। इससे पहले वकील था—दिन-भर 'हुजूरेआला' और 'योर ऑनर', 'योर लॉर्डशिप' का नारा लगाता रहा है। अपने पुश्तैनी गाव से शहर तक वकालत के अलावा राजनीति के गन्दे खेल खेलता रहा है। यह साहित्य और नृत्य की आत्मा को भला क्या पहचानेगा ? लाट साहव के प्रशसा-सूचक कथन पर यह अपनी ओर से कोई टीका-टिप्पणी नही कर सकता, इसलिए मुस्कराकर रह गया। गोया कहना चाहता हो—मुस्कराकर ही मुझे अपनी इज्ज़त वचाने दीजिए। आप वडी वेढव वातें कह रहे हैं और उनमें से एक भी मेरे पल्ले नही पड रही है। भगवान भला करे शिक्षा विभाग के उन अफसरो का, जो मेरे भाषण लिख देते हैं और मैं कोठरी वन्द कर उन्हें रट लिया करता हू।

नृत्य करते हुए दिवाकर मलिक ने देख लिया था कि प्रकाश वावू और लाट साहव में वातें भी हो रही हैं। और उन्होंने कल्पना कर ली थी कि दोनो उनके ही वारे मे चर्चा कर रहे हैं, क्योंकि दिवाकर मलिक एक वहुत ही अच्छे नर्तक हैं, अव यह कहने की आवश्यकता नही रही। आवश्यकता तो इस वात की रह गई कि उनके लिए कुछ किया जाए।

पन्द्रह मिनट का इण्टरवल।

दर्शको को वाधे रखना है। पूर्वी वायलिन लेकर मच पर आती है। कोई आकर कह जाता है—अव आप महानुभाव थोडी देर के लिए इस वच्ची का वायलिनवादन सुनिए। सुयोग्य और साधक पिता की पुत्री पूर्वी मलिक !

तीन मिनट बीतते-बीतते पूर्वी ने राय जयजयवन्ती को जवानी पर ला दिया है। कभी-कभी तो इतना धीरे हाथ चलाती है कि लगता है आवाज खो गई है और फिर आवाज़ आने पड़ती है। ट्यूशन के ज़रिये या स्कूल-कालेजों में वाद्यवादन सीख रही धन्ना सेठों की पाउडर क्रीम छाप बेटियाँ भीतर-ही भीतर लज्जित हो उठती हैं। इन सबों की कलाओं को पूर्वी ने जैसे एक ही झपट्टे में उठा कर कहीं और फेंक दिया है। मगर, एक बात है। उनको संगीत सिखलाने वाले मैट्रिक पास चक्कर हैं।

उधर परदे के पीछे पोशाक बदलते हुए दिवाकर मलिक कल्पना और यथार्थ के झूले पर झूलते हुए सोच रहे हैं

लाट साहब ने कहा, 'मुझे दो-एक लोगों ने बतलाया है कि दिवाकर मलिक आर्थिक दृष्टि से बड़े कष्ट का जीवन बिता रहे हैं। कुछ सोचिए कि इनके लिए हम लोग क्या कर सकते हैं।

'सोचा जाएगा। प्रकाश बाबू इतना ही कहते हैं।

मन्त्री का इतना कहना ही काफी है—दिवाकर मलिक का विश्वास है।

एकाएक सारी बत्तियाँ बुझ जाती हैं। एक-एक दर्शक की आँखों पर काली पट्टियाँ चढ़ जाती हैं। वे सब अपने साथ पता नहीं, क्यों एक-एक काली पट्टी लेकर आए हुए थे। एकदम शान्ति छा जाती है। कभी-कभी संतरियों के बूटों की धमक सुनाई पड़ जाती है। फिर नाटक चालू हो जाता है। स्टेज पर एक बड़ी-सी गोल मेज़। मेज़ पर दो गुलदस्ते सजे हुए हैं दोनों ओर एक-एक कुर्सी। एक पर लाट साहब और दूसरी पर माननीय शिक्षा मन्त्री।

लाट साहब पूछते हैं, "क्या कलाकारों के सहायतार्थ जिस कोष की स्थापना हमने की थी उसमें रुपयों का अभाव है?"

मन्त्री महोदय उत्तर देते हैं 'अभाव नहीं है। पर कोष में और रुपये चाहिए।

'इनके लिए तो आपका विभाग ही कुछ करेगा न?"

"हाँ।

"तो आप सेक्रेटरी से फाइल क्यो नही मागते ?"

"मागूगा ।"

"अव तक माग लेना चाहिए था । देखिए, वात ऐसी है कि आप लोगो ने मुझे उस कोप का अध्यक्ष वनाया जरूर है, मगर सारी चुटिया तो आप पकडे वैठे है । उस कमेटी के वरिप्ठ मेम्वर आप हैं। आपके विभाग के कमिश्नर हैं ।"

"हा ।"

"इतनी देर होती है । क्या मैं वदनाम न होऊगा ?"

"श्रीमान जी, इसीलिए तो हम लोगो ने अनुरोध किया था कि आप अध्यक्ष वन जाइए ।"

सुन कर लाट साहव मन्त्री महोदय का मुह देखने लगते हैं । पीठ के पीछे थोडी दूर पर खडा अगरक्षक जैसे ऊव रहा है ।

"भाई, आप लोग भी गजव करते हैं ।"

"ऐसे गजव रोज़ हुआ करते हैं ।"

"मैं तो चाहता था कि उस कोष से हर माह कोई निश्चित रकम दिवाकर जी को मिला करे ।"

"यहा दिवाकर जी जैसे जाने कितने हैं ।"

"मैं तो वाहर का आदमी ठहरा, मुझे क्या पता ।" लाट साहव वोलते हैं ।

प्रकाश वावू का कहना है, "इसीलिए तो सव कुछ हम लोगो ने अपने हाथ में रखा है । आपको सिर्फ दस्तखत करने के लिए अध्यक्ष वना दिया गया है । हम लोग यहा के हैं और हम जानते हैं कि यहा का कौन-सा साहित्यकार, कलाकार किस खेमे का है । कौन किस पार्टी का हिमायती है ।"

लाट साहव अपना सिर थाम लेते हैं, "तो क्या सास्कृतिक विकास के निमित्त स्थापित कोप के मामले मे भी आप लोग राजनीतिक दूरवीन से काम लेते हैं ?"

"और नही तो क्या !"

"यानी आप सभी राजनीतिक कछुए हैं ?"

मन्त्री महोदय आँखें तरेर बैठते हैं। कहते हैं "गवर्नर होने के नाते आप हमारे निर्णयों पर हस्ताक्षर करने के लिए बाध्य हैं। आप हमारे कामों और रवैये में दखलन्दाजी नहीं कर सकते। आपको मालूम होना चाहिए कि आप एक चपरासी का तबादला तक नहीं कर सकते हम चीफ सेक्रेटरी को अपने कक्ष में बुलाकर फजीहत कर सकते हैं।"

लाट साहब जैसे आत्मसमर्पण करने के मूड में आ जाते हैं। कहते हैं "मैं इस तरह की भाषा नहीं बोल सकता। मैं अपने पद की मर्यादा जानता हूं। मगर, एक वृद्ध साहित्यकार मुझसे मिले थे। उनका नाम चारुचन्द्र है। उन्होंने मुझे बतलाया कि दिवाकर जी ने अपनी कन्या का विवाह लगभग तय कर रखा है। उसी के खर्च के लिए उन्होंने आवेदन पत्र दिया है। तीन माह से ज्यादा हो गए।

मन्त्री लापरवाही से उत्तर देते हैं "हो गए होंगे। मैं आवेदन पत्र डायरेक्टर के पास होते हैं। नीचे से सब कुछ पका-पकाकर ही तो मेरे पास आता है।"

"वह तो है। लेकिन यह इमाम साहब का खिचड़ा कब पकेगा?

'आप परेशान न होइए। डायरेक्टर चीफ मिनिस्टर का आदमी है। मैं उसे बुलाकर डाटूंगा तो मन्त्रिमण्डल से हटा दिया जाऊंगा। दुनिया का नियम है—पहले हम घर में दिया जलाते हैं फिर मस्जिद में। वह डायरेक्टर चीफ मिनिस्टर के चुनाव क्षेत्र का है। उसके हाथ में तीन हजार वोट हैं।'

"और दिवाकर मलिक के हाथ में?" लाट साहब पूछ बैठते हैं।

'मुश्किल से तीन।"

लाट साहब सिर झुका कर कुछ सोचने लगते हैं। फिर कहते हैं, "मन्त्री महोदय, हम लोग खर्च में कुछ कटौतियां करें और जो रकम बचे उस" ।

प्रकाश बाबू बात काट देते हैं "इसका आदेश विभागीय प्रमुखों को दे दिया गया है। कम सर्दों के पत्रोत्तर में आधा पेज खर्च करें। रोज-रोज दफ्तर में झाड़ू न लगवाएं, वरना झाड़ू घिस जाएगा और नया झाड़ू खरीदना पड़ेगा। फाइलों पर जमी धूलें साल-भर में सिर्फ एक बार झाड़ी

जाए। कागज़ और लिफाफे की बचत के लिए पब्लिक के आवेदन-पत्रो के उत्तर न दिए जाए। जिसे गरज़ होगी, खुद दफ्तर का चक्कर लगाएगा। ठीक है न, सर ?"

लाट साहब उर्फ सर अपने ए० डी० सी० से कहते हैं, "सरदर्द की एक गोली लाओ।" और मन्त्री जी से प्रार्थना करते हैं, "इससे काम नही चलेगा। हम लोग उद्घाटन करना छोड दें। यह धन्धा मुझे पसन्द नही। इसमे सरकारी कोष का बहुत बडा अश निकल जाता है।"

"आप छोड सकते हैं, यह धन्धा छोडना हमारे वश की बात नही। यह गगा बहती रहेगी और हम हाथ धोते रहेगे।"

"इस काम मे समय भी तो बरबाद होता है। आप ज़रा हिसाब तो लगाइए कि साल-भर मे प्रत्येक मन्त्री का औसत कितना समय उद्घाटन-समारोहो मे लगता है। फिर सुरक्षा व्यवस्था पर कितना खर्च आता है। मेरे खयाल से इन खर्चों को बचाकर हम लोग दिवाकर मलिक जैसे सैकडो साहित्यकारो-कलाकारो का कल्याण कर सकते हैं। समय की बचत होगी। उसमे आप फाइलो को देख-पढ सकते हैं। क्या खयाल है आपका ?"

"सर, उद्घाटन-समारोहो मे ही तो हम लोग अपनी राजनीतिक भडास निकालते हैं। यह काम सेक्रेटेरियट मे बैठे-बैठे भला कैसे हो सकता है ?"

"अब आप जो कहे, मैं तो अपने कोष से दिवाकर मलिक को अवश्य कुछ दूगा।"

"दीजिए, मगर ज़रा अपने सेक्रेटेरी से पूछ लीजिएगा कि आप इस अधिकार का प्रयोग किस सीमा तक कर सकते हैं। ये नाचने-गाने वाले और कविताए करने वाले ज़माने से परेशान रहे हैं। हम तो अपनी स्थिति बदलने के लिए चुनाव लडते हैं, इनकी स्थिति बदलने के लिए नही। लेकिन अब तक बीसियो कलाकार मुझसे माला पहन चुके हैं।"

इसी समय अगरक्षक अपनी बाईं कलाई लाट साहब के सामने कर देता है और निजी सचिव आकर सूचना देता है कि विरोधी दल के नेता आ गए हैं। उन्हे समय दिया गया था।

सुरेश पाठक का यह तर्क दुवे जी को दु खी कर गया। कुछ झल्ला कर वोले, "छोडिए, आपको इन वातो मे पडने की ज़रूरत नही। आप मकान खाली कर दीजिए। रिश्ता किरायेदार और मकान-मालिक का है, और आप हैं कि पट्टीदार की तरह वहस कर रहे हैं।"

सुरेश पाठक ने दुवे जी को चिढाने की कोशिश करते हुए कहा, "आप डूवकर पानी पीते हैं, दुवे जी ! सच वोलिए, आपके सुपुत्र अदालत मे लिखकर देंगे कि मैं उनका किरायेदार हू और किरायेदार के रूप मे डेढ कमरे का किराया नव्वे रुपये वसूलता हू। इसमे विजली का खर्च शामिल नही है।"

दुवे जी ने छूटते ही कहा, "अदालत का नाम क्यो लेते हैं ? जव कमरा ढूढते फिर रहे थे, तव अदालत की याद नही आई थी ? अदालत ·· अदालत आपने मुझसे ज्यादा कोर्ट-कचहरी नही देखी होगी। अदालत सच वोलने के लिए नही है। और हम पहले क्यो अदालत जाएगे ? आपको जाना है, तो आप आगे-आगे चलिए। हम आपके पीछे-पीछे आएगे।"

सुरेश पाठक मुस्करा पडे। वोले, "आप इतनी जल्द तेवर वदल लेंगे, दुवे जी, मैं नही जानता था। मैंने तो ऐसे ही कह दिया। मैं सेण्ट्रल गवर्नमेंट की सर्विस मे हू। मेरा तवादला कभी भी हो सकता है। मुझे अदालत से क्या लेना-देना ! रही वात मकान खाली करने की। प्रयत्न करूगा, और आप महीने-भर की वात कहते हैं, मुझे एक सप्ताह मे कही घर मिल जाए, तो मैं आठवें दिन आपको हाथ जोड दू।"

"खैर, तो मैं ज़वरदस्ती आपको रखूगा भी नही।"

"ठीक है। आप परेशान न हो।"

दुवे जी ने वात वढानी चाही, "हम लोग ऐसे ही लोगो को रखते हैं, जो पहली तारीख को किराया देने लायक हो और ऐसी नौकरी मे हो, जिसमे तवादला होना ज़रूरी हो। समझे न ?"

"हा, समझ लिया। अच्छा ही करते हैं। किरायेदारो का उद्धार करते हैं, गरीव पिता की कन्या का उद्धार करते हैं वाह, खूव ! मकान मे पाव डालने से पहले पेशगी किराया और मैट्रिक पास वेटे पर दस हजार नकद दहेज ! दुवे जी, इस कलिकाल मे आप एक जाली देवता हैं।"

सुरेश पाठक के दिल में आने क्या आया कि रौ में ऐसी बातें बोलते चले गए, हालांकि ऐसा सुनाने का उनका कोई इरादा कतई नहीं था।

चार साल की नौकरी में मणिकान्त पूरा बाबू टाइप का इन्सान बन गया था। पढ़ाई-लिखाई में वह कच्चा था उसका हृदय ही जानता होगा, मगर जमाने के अनुसार उसने पत्थर पर दूब जमा दी थी। शोभाकान्त दुबे ने होश संभालते ही पेशेवर गवाह का धन्धा जरूर अपना लिया था मगर इस पेशे को भी क्या कहा जाए। मरक में लाइन लगी थी। किसी रोज तो दस-पन्द्रह रुपये तक झाड़ लाते और कभी चार-पांच दिनों तक इमली नीम और पीपल के वृक्ष के नीचे दिन-भर चक्कर लगाते रह जाते और कोई दिन चाला मूंगफली खाने में भी साझीदार बनने को नहीं कहता था।

जमाना भी क्या-क्या रंग बदलता है। कोई वक्त था जब किसी झूठे की तलाश करनी पड़ती थी अब ऐसा वक्त था जब सच्चे को ढूंढना पड़ता था। झूठी गवाही देने के लिए एक-से-एक अभियावैतास अदालत में अहाते की महिमा बढ़ाने लग थे। लेकिन चाहे जो हो मणिकान्त ने तीसरी बार में थर्ड डिवीजन से मैट्रिक पास कर ही लिया। मट्रिक क्या पास कर लिया भरी दुपहरी में सूरज के माथे पर खाली पांव उतर गया।

चाव बाबू भी मणिकान्त के परिवार के विषय में ज्यादा नहीं जानते थे। शोभाकान्त दुबे से कहीं साधारण परिचय हो गया था और तब से राह में आते जाते भेंट-मुलाकात हो जाया करती थी। चाव बाबू की आदत भी नहीं थी कि किसी की पारिवारिक बातों को छेड़-छेड़कर पूछें। साधारण गपशप में मालूम हुआ था कि दुबे जी का पुत्र मणिकान्त अब सबजज का पेशकार हो गया है और तनख्वाह के अलावा कुछ ऊपरी आमदनी भी हो जाती है। आठ रुपये वतन में कट तो जाते हैं मगर मज का सरकारी क्वार्टर मिल गया है। उन्हें यह नहीं मालूम था कि शोभाकान्त दुबे पहले अदालत में पेशेवर गवाह का काम कर आजीविका चलाते थे। उन्हें यह भी नहीं मालूम था कि सरकार से मिले क्वार्टर के आधे हिस्से में उसने किरायेदार भी रख छोड़ा है। उन्हें यह भी नहीं मालूम था कि मणिकान्त की कमाई इस कदर है कि शोभाकान्त अब बिना लाइसेन्स लिए रुपये सूद

पर लगाने का चुप्पा कारोबार करते है।

यहा लगभग सौ सरकारी कर्मचारियो के लिए क्वार्टर थे और दो-तीन को छोडकर सबो ने अपने-अपने क्वार्टर का आधा हिस्सा किराये पर उठा रखा था। इतना ही नहीं, इनमे से कई बीमा कम्पनी के एजेण्ट थे, पर सारा धन्धा अपनी बीबी के नाम से करते थे। नियमत सबो के लिए ऐसा करना वर्जित था, पर सच्चाई यह थी कि ऐसा करने मे शायद ही कोई सकोच करता था। और, सरकार ऐसी कि उसकी नज़र मे सिर्फ सरकारी कर्मचारी ही देश के ज़िम्मेवार नागरिक है, कानूनन नागरिक हैं, और सब घुसपैठिए हैं।

आज गवर्नर साहब के यहा से दो सौ रुपये का बैंक ड्राफ्ट दिवाकर मलिक के नाम रजिस्टर्ड लिफाफे मे आया था। उन्होने लिफाफे को खोला, तो ड्राफ्ट नज़र आया। साथ मे एक छोटा-सा पत्र था, जो अग्रेज़ी मे था। दिवाकर मलिक समझ न सके। जहा भी सगीत-सभाओ मे जाते, विदाई के रूप मे नकद पैसे मिलते थे। सो लिफाफा लिए-दिए चारुचन्द्र के पास प्रेस में पहुचे। सौभाग्य से प्रेस का मालिक आज ही दो दिनो के लिए शहर से बाहर चला गया था। यह शहर तो राजधानी का शहर था। किसी दूसरे डिस्ट्रिक्ट टाउन में छपाई-दर के टेण्डर खुलने वाले थे। उस आफिस के बडे बाबू ने एक रोज़ पहले ही बुलाया था और कहा था, "जो भी बने, लेते आएगा। साहब को यह अधिकार है कि बिना कोई कारण बतलाए निम्नतम दर वाले टेण्डर को भी स्वीकार न करें। अजी, आपसे क्या कहना है। मुह खाता है, तो आखें शरमाती हैं' 'तो बस समझ जाइए।"

हज़ार रुपये अपने ब्रीफकेस मे लेकर प्रेस मालिक चला गया था और जाते समय मालिक-मैनेजर की सारी ज़िम्मेदारी चारुचन्द्र पर लाद गया था। प्रेस के दैनिक खर्च के लिए पाच रुपये का एक नोट उनके पास छोडते हुए कहा था, "चौहट्टे पर जो चौधरी जी की दवा की दुकान है, वहा चले जाइएगा। कैशमीमो की छपाई के पैसे बाकी हैं, ले लीजिएगा। उससे काम चलाइएगा। यो तो मैं दो रोज़ के लिए जा रहा हू, मगर कुछ देर भी लग सकती है। बसन्तलाल का आदमी आएगा। दस रसीद-बुक

तैयार है। साठ रुपये उससे वसूल लीजिएगा। और हां पैसा तो कम ही बाईस तारीख है। लेकिन मैं आने पर एडवांस बाटूंगा। एक-एक पैसा सहेज कर रखिएगा।" और उधर मशीन रूम में काम कर रहे कर्मचारियों से कहता गया "मैं लौटकर आते ही एडवांस दूंगा। पैसा दस-बीस की जरूरत हो तो बाबू हैं ही। मैंने उनको सब कुछ बतला दिया है। उनसे तुम लोग कहना। प्रबन्ध कर देंगे।"

चारुचन्द्र ने आज बड़ी निर्भीकता और विनम्रता से दिवाकर मलिक को अपने पास बिठाया। कुशलक्षेम पूछने लगे तो दिवाकर मलिक ने वह लिफाफा उनके आगे रख दिया जिस पर छपा था

'ऑन इण्डिया गवर्नमेण्ट सर्विस।

चारुचन्द्र ने देखते ही पूछा, "यह क्या है मलिक जी?"

"खोलकर देखिए न। मेरी समझ में कुछ नहीं आया तभी तो सोचा कि आपके पास चलूं।"

चारुचन्द्र ने लिफाफे से कागज निकाला और दो-तीन बार उलट-पलट कर देखते हुए कहा, "लीजिए साहब मुंह मीठा कराइए। लाट साहब आप पर खुश हो गए हैं। दो सौ रुपये आपके लिए भेजे हैं। इसे 'डी॰ सी॰ ग्राण्ट' कहा जाता है।"

'डी॰ सी॰ ग्राण्ट क्या होता है?"

चारुचन्द्र ने समझाते हुए कहा 'हिन्दी में इसे 'स्वविवेक अनुदान' कहते हैं। गवर्नर को यह अधिकार है कि जिसे कुछ सहायता देना उचित समझें, इस ग्राण्ट से दें। इसके लिए इन्हें साल में पचास हजार रुपये मिलते हैं।"

'साल भर में पचास हजार?"

'हां।" चारुचन्द्र ने कहा "आपका नृत्य देखकर खुश हो गए होंगे। बड़े कलाप्रेमी हैं।'

दिवाकर मलिक क्षण भर के लिए सोचने लगे—लाट साहब को जब इतना पावर है, तो दो सौ रुपये की जगह पांच सौ भी दे सकते थे। क्या करते! घोर अभाव में बड़ी शक्ति यह होती है कि वह लोभमुक्त को भी लोभयुक्त बना देता है। दिवाकर मलिक की तो स्थिति ही ऐसी थी

जिनके पास अपार धनराशि होती है, वे भी लोभ की चचल चितवन की चोट नही सह पाते हैं।

चारुचन्द्र ने समझाते हुए कहा, "यह वैक ड्राफ्ट मेक्रेटेरियेट ब्राच का है। मेरे एक मित्र वही विधान सभा पुस्तकालय में सहायक लाइब्रेरियन हैं। मैं चिट्ठी दिए देता हू। उनसे मिल लीजिएगा। वे ड्राफ्ट भुनवा देंगे।"

"अच्छा।"

"और क्या हालचाल हैं?"

"वस सव वसीवाले की कृपा है।" दिवाकर मलिक ने कहा। वह श्रीकृष्ण को 'वमीवाला' ही कहा करते थे।

चारुचन्द्र ने पूछा, "मणिकान्त को तो आप देख ही आए और उनके पिता मे भी मिल लिए। अव वतलाइए कि वात कहा तक आगे वढी?"

दिवाकर मलिक वोले, "हा, वह दस हज़ार नकद मागते हैं और कन्या तथा दामाद को अलग से मैं जो कुछ दे सकू, दे दू। कन्या और दामाद को देने की वात तो अलग है। दस हज़ार रुपये तो मेरे लिए दस लाख के वरावर हैं। शोभा वावू ने सोचकर वतलाने के लिए वीस-पच्चीस रोज़ का समय दिया है। मेरी समझ मे एक वात आ रही है। आप वतलाइए कि कैसा रहेगा?"

"कौन-सी वात?"

भीतर मशीन चल रही थी। उसकी घरघराहट गूज रही थी। विजली आफिस का काम हो रहा था।

दिवाकर मलिक ने यों ही अगल-वगल खुफिया निगाह डाली। वह अपनी वात सिर्फ चारुचन्द्र को ही सुनाना चाहते थे। आसपास कोई और नही था। आश्वस्त होकर कहने लगे, "वन्धुवर, मैंने सोचा है कि मकान वेच दू या गिरवी रख दू। कन्या का विवाह हो जाए तो गगा नहाऊ। एक साहव पुराने परिचित हैं। मैंने इशारे से उनको कहा भी है।"

चारुचन्द्र वडे सहज भाव से वोले, "और इशारे से वह तैयार भी हो गए होंगे।"

"आपका मतलव?"

"मतलव यह कि ऐसे लोग गरजमन्दो की तलाश में रहते हैं।"

"और परमानन्द तो हूं ही। एक बैंक वाले साहब भी जान-पहचान के हो गए हैं। नये आए हैं। मुहल्ले में ही किराये का मकान लिया है। उन्होंने कहा कि बैंक मकान गिरवी ले सकता है परन्तु साथ ही दो ऐसे आदमियों की जमानत चाहिए, जिनकी हैसियत इतनी रकम से ज्यादा की हो।"

"हां ऐसा ही होता है।"

"उन्होंने कहा कि अगर एक ही आदमी काफी तगड़ा हो तो भी काम चल सकता है।"

"दिवाकर जी हम लोग पैसों के बाजार में साग-भाजी के बराबर हैं। सवाल यह है कि ऐसा आदमी कौन होगा या फिर आगे बढ़ा जाए। जुबानी तो लोग यहां तक कह देते हैं कि साहब आपका जहां पसीना बहेगा वहां मैं अपना खून बहा दूंगा मगर मौका आने पर वे खून क्या आंसू बहाने तक को आगे नहीं बढ़ते। चारुचन्द्र जी अपने अनुभव के आधार पर एक ही सांस में कह गए।

दिवाकर मलिक जैसे तपाक से बोले "और किसी पर तो विश्वास नहीं आता मेरा लेकिन एक आदमी है जो मेरे लिए इन्कार नहीं कर सकता। हैसियत भी कुछ कम नहीं है।"

"कौन है वह सज्जन ?

"प्रकाश बाबू।"

"कौन प्रकाश बाबू एजुकेशन मिनिस्टर जो हैं ?"

"बस-बस। आप तो एकदम लालबुझक्कड़ निकले।'

"उनसे जमानत तो बड़ी अच्छी बात है।

"यही उन पर शक नहीं होता मुझे।

चारुचन्द्र बोले "मेरे साहब उनके ही यहां न आपका आवेदन-पत्र पड़ा हुआ है।"

'हां वह तो पड़ा हुआ है। मगर, वह सरकारी काम है। उसमें तमाम नियम-कायदे चलते हैं। जो काम सीधे उनके हाथ का है उसमें वह कोई हीला-हवाला नहीं करेंगे। हमारे रिश्ते बड़े गहरे हैं। उनकी दो लड़कियों को मैंने अपनी लड़की समझकर भावना-विरचना सिखाया।

दे सकते थे, मगर लडकियो मे कोई खास गुण है, यह कहने की हिम्मत नही थी। मैंने साल-भर मेहनत की। दोनो लडकिया अच्छा नाचने लगी। वर की कृपा से दोनो की अच्छी शादिया हुईं।"

"उन्होंने आपको कुछ दिया भी तो होगा ?"

दिवाकर मलिक वोले, "भगवान गवाह है, चारु वावू। न मैंने कुछ मागा और न उन्होंने कुछ दिया। तव भी एक वात है। उनसे मिलने-जुलने तो वडे लोग ही आया करते हैं। पैसे वाले और खानदानी आदमी ठहरे। सवो से मेरा परिचय कराते और कहते थे कि मलिक जी मेरे दोस्त हैं, इनकी दोस्ती पर मुझे नाज़ है।"

"अव नही कहते होंगे।" चारुचन्द्र ने वेलौस हो कर कहा।

दिवाकर मलिक इस वार शका मे पड गए। कुछ सोचते हुए वोले, "जव से मन्त्री हुए है, तव से मौका ही नही मिला कि उनसे मिलकर दिल की वातें कहू। खैर, हैं तो वही प्रकाश वावू। इतना तो नहीं वदल गए होंगे। और आदमी चाहे जितना वडा हो जाए, अपने हित-मित्रो को नही भूलता।"

चारुचन्द्र इस पर कुछ कहना चाहते थे, मगर कुछ कह न सके। इसी वीच उन्होंने मशीन पर कागज़ सभाल रहे आदमी को वुलाकर कहा, "दो गिलास चाय ले आओ। कहना, ज रा ताज़ा लिकर वनाएगा।"

दिवाकर मलिक ने कृतज्ञता से भर कर कहा, "चारु वावू, आप मेरी वडी खातिर करते हैं। चाय मेरे लिए न मगवाइए, मैं चाय नही पीता। पान खिलाकर आशीर्वाद दीजिए कि यह यज्ञ पार लग जाए।"

चारुचन्द्र ने कहा, "दहेज-निरोध कानून एकदम वेकार सावित हो रहा है। लेनेवाले ले ही रहे हैं और देनेवाले दे ही रहे हैं। खैर, करना क्या है ? मिनिस्टर साहव आपका काम कर दें तो ।"

"हुआ ही समझिए, कहने-भर की देर है।" दिवाकर मलिक ने प्रकाश वावू के साथ अपने पूर्वसम्वन्धो को याद करते हुए कहा।

चारुचन्द्र वोले, "ईश्वर उनका भला करे।"

स्टेज का सारा सेट बदल चुका है।

दर्शकों की पलकें पसीने से गीली हो रही हैं। पर हवा लगने देने के लिए वे अपनी आंखों पर चढ़ी काली पट्टी उतारने को तैयार नहीं हैं। वे जमसमीर का रूमाल खींचते हैं और पट्टी के भीतर धीरे-धीरे रूमाल का छोर ले जा कर पलकों का पसीना पोंछ ले रहे हैं। न जाने आनेवाले दृश्य को देखने से वे खास तौर से डर क्यों रहे हैं।

सत्य या विषधर सम्भवत: फन खोलकर स्थिति को भयानक बना देगा। वह दर्शकों के बीच बड़ी तेजी से उतर पड़ेगा। पता नहीं तब विशुद्ध कला के इन प्यासों का क्या हाल हो।

सेट बदल चुका है। परदे पर एक आलीशान कोठी का चित्र है। उस पर कोई झण्डा लहरा रहा है। नीचे बाहर के कक्ष में दो पढ़े-लिखे युवक और एक अनपढ़। बाईं ओर के बरामदे में राइफल लिए सन्तरी खड़ा है। पश्चिम की ओर का भाग सूना दिखलाई पड़ता है।

जहां दो पढ़े-लिखे युवक हैं वहां एक बड़ी-सी मेज है। मेज पर एक गुलदस्ता है—प्लास्टिक के रंग-बिरंगे फूलों से सजा हुआ। इसी समय डरते-डरते आगे बढ़ते हुए दिवाकर मलिक वहां आ जाते हैं। परन्तु, वहां तक आते ही उनका सारा भय जाने कहां चला जाता है। वे दोनों नवयुवक उन पर दृष्टि डालते हैं और तनिक सतर्क हो जाते हैं। उस ओर खड़ा चपरासी जानें कहां से एक समोसा निकाल कर खाने लगता है। मेज पर जैसे आसमान से दो-तीन समाचारपत्र आ गिरते हैं। दोनों में से एक नवयुवक उन्हें किसी जादूगर की तरह थाम लेना चाहता है। मगर, वे फर्श पर बिखर जाते हैं। चपरासी लपकता है और उन्हें एक हाथ से उठा उठाकर मेज पर रखता है। दूसरा युवक फौरन उठता है और बगल में से एक विशाल रजिस्टर उठा लाता है। उसे पहले देखता है फिर बड़े-बड़े पन्ने पलटने लगता है। हर पन्ने पर समाचारपत्रों की

होशियारी से चिपकायी हुई हैं। कही-कही मन्त्री महोदय के चित्र भी नजर आ जाते हैं, जो पहले ममाचारपत्रो मे प्रकाशित हो चुके हैं। दूसरा युवक पाम खडे चपरासी से कहता है, "उस कमरे की पूर्व वाली आलमारी मे गोद की शीशी और ब्लेड है। उठा लाओ।"

पहला युवक दिवाकर मलिक की ओर उपेक्षा से देखता है और पूछता है, "आप कहा से आए हैं?"

"यही ने।"

"यही मे?"

"हा।"

"किम सिलसिले मे आए है?"

उधर दूसरा युवक इतमीनान से कुर्सी पर बैठ जाता है और हाथ मे ब्लेड थामे समाचारपत्रो को पढने लगता है। वह तेजी से पृष्ठो को पलटता चला जाता है। दो-एक जगह लाल पेन्सिल से टिक् मार्क लगा देता है। पहला युवक दिवाकर मलिक की ओर से मुह फेर लेता है, और अपने सहकर्मी युवक से पूछता है, "क्यो जी, है कुछ?"

उत्तर मिलता है, "है तो जरूर। मगर यह 'उदयास्त' वाला साफ दगा दे गया।"

"दगा दे गया, क्या हुआ?"

"बच्चो मे मिठाइया बाटते हुए मन्त्री जी का चित्र नहीं प्रकाशित किया। मैंने कह भी दिया था। मन्त्री जी ने तब मीटिंग मे यह भावना व्यक्त की थी कि वह चाहते हैं कि सिर्फ हमारे राज्य के बच्चे क्या, पूरे मुल्क के बच्चे रोज़ मिठाइयो से ही नाश्ता करें और पढ-लिख कर देश का नाम ऊचा करें। यह काम कैसे हो, इसके लिए एक समिति का गठन शीघ्र ही किया जाने वाला है।"

तभी चपरासी अचानक भागता हुआ बाहर निकलने लगता है। दूसरा युवक पूछता है, "क्यो जी, क्या हुआ?"

चपरासी बडी जल्दी मे कहता है, "वे दोनो लौंडे फिर कोयले और रद्दी कागज़ बटोरने बोरिया लिए आ गए। कल ही मैंने इनकी मरम्मत की थी • सा•••आ• 'आ ••ले।"

पहले युवक का नाम रंजन है और दूसरे का सुमन।

रंजन तीस-बत्तीस साल से कम का न होगा और सुमन शायद पच्चीस छब्बीस साल का हो। अब रंजन फिर दिवाकर मलिक की ओर मुखातिब होकर पूछता है "यहां कैसे-कैसे आए ?

बायें कन्धे पर पड़े रेशमी दुपट्टे को संभालते हुए दिवाकर मलिक कहते हैं "प्रकाश बाबू से मिलने आया हूं।

रंजन दिवाकर मलिक को नीचे से ऊपर देखने लगता है गोया उनसे कोई भारी भूल हो गई हो। रंजन की आंखें उनसे शायद पूछ रही हैं—भले आदमी तुम्हें 'माननीय मन्त्री महोदय' कहना चाहिए था। फिर वह प्रत्यक्षतः प्रश्नार्थक पूछता है 'प्रकाश बाबू प्रकाश बाबू कौन "

"अपने सूबे के शिक्षा मन्त्री।

"तो यही न कहना चाहिए। प्रकाश बाबू तो इस शहर में न जाने कई दर्जन होंगे। इनमें मन्त्री तो एक ही ।

"जी हां जी हां ।

सुमन एकाएक पूछ बैठता है "आपको बुलाया गया था ?

दिवाकर मलिक कहते हैं "जी ना। बुलाया नहीं गया था।

रंजन तनिक रोब में पूछता है 'तो आप कैसे चले आए क्या नाम है आपका ? क्या करते हैं ?

दिवाकर मलिक को लगा जैसे कहीं आकर फंस गए। फिर भी उन्होंने साहस बटोर कर कहा है "मन्त्री जी मेरे पुराने मित्र हैं। मेरा नाम दिवाकर मलिक है। मैं कचक डासर हूं।"

सुमन कुछ धीरता से पर उपेक्षा से ही कहने लगा है आह ए मित्र हैं। ठीक कहा आपने—पुराने मित्र !

"मैं समझा नहीं" ।

"इसमें कुछ ज्यादा नहीं समझना है महाराज आपके यहां हम खूब कार भेजते।'

'आप डासर हैं ?' रंजन पूछता है जैसे ... रहे हों। फिर कहता है "होंगे भाई। ... राजधानी है। यहां सैकड़ों लोग डासर ...

काजल डाले, वाल वढाए नज़र आते हैं।"

दिवाकर मलिक के कानो मे रजन के ये शब्द उतर नही पा रहे हैं। वह जैसे घूरते हुए उसे देखते हैं और कहते हैं, "खैर, इससे आपका तो कोई नुकसान नही होता···प्रकाश वावू हैं तो ?"

"हा, हैं, मगर मिल नही पाएगे।" सुमन वडी लापरवाही से कहता है और समाचारपत्र मे प्रकाशित एक खास खवर वाले अश को ब्लेड से काटने लगता है।

"क्यो, क्या वात है ? उन्हे मेरा नाम वतला दिया जाए।"

"नाप वतलाने कौन जाए ? वह फाइलें देख रहे हैं। नाराज़ होंगे।"

"कुछ भी देख रहे हो। मेरा नाम सुनते ही मुझे वुला लेंगे। नाराज़ नहीं होंगे।" दिवाकर मलिक को इस वार कुछ ज़ोर देकर कहना पडता है।

रजन तनिक रोव मे आ जाता है और कहता है, "क्यो, आप ऐसा कैसे कह रहे हैं ? क्या आप विधायको से भी ज्यादा महत्त्वपूर्ण हैं ? अभी उन्होंने दो विधायको से मिलना स्वीकार नही किया।"

"विधायक, विधायक कौन होते हैं, भैया ?" दिवाकर मलिक पूछते हैं।

"एम० एल० ए०। ये लोग कानून वनाते हैं, राज्य का इतिहास-वदल देते हैं।" सुमन जवाव देता है।

"अच्छा।" दिवाकर मलिक का स्वाभिमान शायद जाग पडता है। वोल पडते हैं, "मैंने महिला कालेज मे डास-टीचर के लिए आवेदन-पत्र दिया था। उस पद के लिए मैट्रिक पास होना ज़रूरी था ·।"

रजन हलका ठहाका लगता है, "ओह हो, तो डासर महोदय, आप मैट्रिक पास भी नही हैं ? वाह, एक तो मिया तुतले, दूसरे मुह मे रोटी !"

"हा, मैं मैट्रिक पास नही हू, मगर सुनिए जनाव, ये जो एम० एल० ए० होते हैं और राज्य का इतिहास-भूगोल वदलने का काम करते हैं, कौन-कौन-सी योग्यताए रखते हैं ? कह दिया जाए कि नटवरी का एक मुखडा लगाओ, तो पसीना छूटने लगे !"

"यह जनतन्त्र है। इसमे जो अपने लिए जितना वोट वटोर सके, वह उतना ही योग्य होता है। मगर श्रीमान जी, आप वहस न कीजिए। आपसे

शो-6

कहा जा चुका है मन्त्री महोदय फाइलें देखने में व्यस्त हैं। जाइए। हां मिलना ही हो तो किसी एम० एल० ए० को पकड़िए और हां यह नटवरी का मुखड़ा आप लगाते रहिए, बल्कि [illegible] लगाते रहिए, नेताओं को इन फिजूल की बातों से कोई मतलब नहीं। सुमन कहता है। फोन उसने मेज पर ही अपनी दायीं ओर रख दिया है।

दिवाकर मलिक शायद घबराहट में बोल पड़ता है 'यदि यही हाल रहा तो हम हड़ताल करेंगे।"

"जाइए, जाइए, बच्चों जैसी बातें न कीजिएगा। आप जैसे लोग पंजाब से कन्याकुमारी तक सब जगह हड़ताल कर दें तो भी कोई पूछने नहीं आएगा कि आपकी मांगें क्या हैं। कहकर रंजन [illegible] भय दिखलाता है "सुनिए, अब आप जाते हैं या हमें कुछ और करना पड़ेगा" ?

दिवाकर मलिक का स्वर थरथराने लगता है। कहते हैं "नहीं-नहीं। मैं चला जाता हूं। कुछ और करने की आवश्यकता नहीं।

रंजन और सुमन उनकी ओर हिकारत-भरी नजरों से देखने लगते हैं और वह भयातुर चेहरा दर्शकों की ओर घुमाकर मूर्तिवत् खड़े हो जाते हैं।

17

राज्य मे दलवदल पार्टी की सरकार शासन कर रही थी और सहाय जी इसी शासक पार्टी के विधायक थे। सहाय जी शहर के पश्चिमी इलाके का प्रतिनिधित्व करते थे और जब भी बाढ अथवा सूखा पडता, कम्बल और अनाज बटवाने का भार अपने दुर्बल कन्धो पर ले लेते थे। दिवाकर मलिक का घर इनके ही चुनाव क्षेत्र मे पडता था। सयोग अथवा प्रेरणा से दिवाकर मलिक इनके पास पहुच गए। इन्होंने एसेम्बली भवन मे ही माननीय शिक्षा मन्त्री से इनकी भेंट करा दी। प्रकाश बाबू मिल कर मुस्करा दिए, तो दिवाकर मलिक को लगा, जैसे सोकर सवेरे उठे हैं, तो देखते क्या हैं कि तकिये के नीचे कोई पाच-सात हजार के नोट पडे हुए हैं। खुशी से गद्गद हो उठे। उनकी ओर सकेत करते हुए प्रकाश बाबू ने सहाय जी से कहा, "मै इनको जानता हू। कथक नृत्य के क्षेत्र मे इनकी उपलब्धिया सराहने योग्य हैं।" फिर दिवाकर मलिक से पूछा, "कहिए, आप क्या चाहते हैं ?"

लच आवर हो चुका था। एसेम्बली भवन के अन्दर और बाहर सामान्य से अधिक चहल-पहल दीख रही थी। कोई घिघियाने पहुचा था, कोई रोने, कोई हसने-मुस्कराने और कोई बिचौलिया बनकर शासक और शासित—दोनो पक्षो का कल्याण कराने आया था। इनमे पिछली सरकार के कई भूतपूर्व मन्त्री, राज्य मन्त्री और उपमन्त्री थे, जो अब यहा विधायक के रूप मे उपस्थित थे और इनमे से सबो के कन्धे से एक-एक झोला लटक रहा था, जिनमे उन लोगो के नाम, पते और कीचड मे फसी उनकी उन गाडियो का विवरण था, जिनके लिए वर्तमान मन्त्रियो से पैरवी करनी थी। शासक दल मे नही रहकर भी वह जनकल्याण की भावना से बुरी तरह पीडित थे।

"कहिए, आप क्या चाहते हैं ?" प्रकाश बाबू के इस प्रश्न मे कुछ रूखापन नजर आया। मगर, दिवाकर मलिक ने सोचा कार्यव्यस्त रहने के

कारण ही यह स्थापन है करना प्रकाश बाबू की वाणी में चाहत से कम मिठास तो किसी हालत में हो ही नहीं सकती थी। अतः उत्तरस्वरूप बोले "आपसे कुछ निजी बातें करनी थीं। वह यहां सम्भव नहीं जान पड़ता।

'ठीक है, आप रात आठ बजे आ जाइए।

'वहां लोग आपसे मिलने नहीं देते। बड़ी अभद्रता से बातें करते हैं।' दिवाकर मलिक ने कहा।

'कोई अभद्रता से बातें नहीं करेगा। मैं कह दूंगा।

"तो आज रात आठ बजे ज़रूर आऊंगा। नमस्ते। दिवाकर मलिक ने कहा। शिक्षा मन्त्री पूल की ओर मुड़ गए। कुछ और विधायक प्राइवेट बातें करने को व्याकुल नज़र आ रहे थे।

आज रात किसी ने दिवाकर मलिक को नही रोका था। वह सीधे प्रकाश बाबू से मिले। सारी बातें कमरे मे हो रही थीं और वहा कोई अन्य व्यक्ति नही था। दिवाकर मलिक ने अपनी समस्याओ से प्रकाश बाबू को अवगत करा दिया। प्रकाश बाबू कुछ सोचते रहे।

दिवाकर मलिक कभी उनके चेहरे के भावो को पढते, कभी मेज के एक कोने मे रखे कीमती टेबललैम्प को देखते। इतने मे प्रकाश बाबू ने घण्टी दी, तो एक नौकर आकर हाजिर हो गया। वह काफी नाटा था। एक प्रकार से उसे बौना ही कहा जा सकता था। प्रकाश बाबू ने उससे क ा, "नाश्ता और कॉफी।"

बौने ने दाहिने हाथ की पहले दो उगलिया उठायी और प्रश्नसूचक दृष्टि से मन्त्री महोदय को देखा। मन्त्री महोदय ने कहा, "नही, एक।"

"नाश्ता मेरे लिए ।" दिवाकर मलिक जैसे निहाल हो उठे। जिससे मिलना मुश्किल था, उसी के साथ नाश्ता ! पूछा, "और तो सब ठीक है न ?"

"सब ठीक है, दिवाकर जी।"

नौकर चीनी मिट्टी की प्लेट मे चार मिठाइया, एक सन्तरा और थोडा-थोडा सेव-दालमोठ रख कर चला गया। प्रकाश बाबू ने बडी मुहब्बत से कहा, "नाश्ता कीजिए। वह पानी और कॉफी ला रहा होगा।"

"और आप ?"

"मैं ? मेरा न पूछिए। काम करते-करते सेहत मिट्टी मे मिल गई। मन्त्री बन कर मैं अच्छा-खासा बेवकूफ बन गया। वकालत के साथ-साथ सेहत भी चली गई। अन्न तो कतई हज्म नही होता। सिर्फ दूध और फल लेकर दिन काटता हू। अगली बार से तो मैं मन्त्रिपद को दूर से ही नमस्कार करूगा।"

दिवाकर मलिक के सामने ऐसा नाश्ता हाल मे कब आया था, वह

मस्तिष्क पर जोर देकर भी नहीं स्मरण कर पा रहे थे। उनकी जीभ चटपटाने लगी। वह क्षण भर को भूल गए कि घर पर खाने के लिए क्या बन रहा होगा। शाम को धर्मपत्नी ने कहा था, 'आटा है सब्जी नहीं है। मगर चिन्ता न करो। आध पाव मूंग की दाल पड़ी है। उसी को पीसकर रसा लगा दूंगी।

एक रसगुल्ले को उन्होंने एक ही झपट्टे में मुंह के भीतर डाल लिया और फिर सेव-दालमोठ जबान चटखार-चटखार कर खाने लगे। इस स्वार्थपरायणता के लिए यह आदमी दोषी नहीं था बल्कि व्यवस्था दोषी थी इस रहस्य को गहरे पानी पैठ कर ही समझा जा सकता है। इसी बीच रंजन कुछ पूछने के लिए कमरे के द्वार पर आ खड़ा हुआ। प्रकाश बाबू ने किंचित् गम्भीरता से कहा 'आइए, ये तो मेरे मित्र हैं।

रंजन चौखट लांघ कर पास आ गया। दिवाकर मलिक ने उसकी ओर बड़े गर्व से देखा गोया उसे यह जतलाना चाहते हों कि देख लो अपनेराम कोई मामूली हस्ती नहीं है। उस दिन मेरे साथ बढ़-बढ़ कर बातें करके तुमने कुछ अच्छा नहीं किया। तुम तो मन्त्री जी के पास आकर सहमे-सहमे खड़े हो और मैं कुर्सी पर बैठा हुआ मिठाइयों पर हाथ साफ कर रहा हूं।

रंजन ने न जाने बड़ी धीमी आवाज में और इशारे से क्या-क्या कहा प्रकाश बाबू बोले 'ठीक है। मैं कल तक ऑर्डर करके फाइल लौटा दूगा। कह दीजिए, चिन्ता न करें।

रंजन चला गया तो गला साफ करते हुए प्रकाश बाबू ने कहा "दिवाकर बाबू आप सिर से पैर तक कलाकार ठहरे। इस दुनिया में कितना छल प्रपंच है आप क्या जानें? बैंक के हाथ मकान गिरवी रख कर मकान से हाथ धोने के सिवा कुछ और नहीं मिलेगा। जरा पूछिए किसी से कि बैंक में रुपये जमा करने पर किस दर से सूद मिलता है और बैंक से कर्ज लीजिए, तो बैंक किस दर से सूद वसूलता है। समाचारपत्रों में बड़े बड़े विज्ञापन छपवाते हैं और लोगों को उनके जरिये बतलाते हैं कि हम जमा रकम पर बहुत अच्छा सूद देते हैं। मगर कर्ज देने पर ये बैंक वाले ... पठानों से भी ज्यादा वसूलते हैं। मैं ऐसे कई लोगों को जानता हूं जिन्होंने

वैंक के हाथ अपने मकान गिरवी रखे, मगर सूद ही जब नही भर सके, तो असल यानी मूल क्या लौटाते ? फल यह हुआ कि नालिश करके वैंक ने उनके मकान हथिया लिए और वे वेचारे वेघर हो गए। इससे तो वेहतर होगा कि आप किसी अपने आदमी के हाथ गिरवी रखें। अपना आदमी वुरे-से-वुरा होगा, तव भी मुहब्वत करेगा। मेरे पास रुपये होते, तो यह नौवत ही न आती। आपके काम आ जाता, गगा नहाता। आप जैसे लोगो की सेवा करना और भगवान के साक्षात् दर्शन करना वरावर है।"

मन्त्री जी का यह छोटा-सा भाषण सुनकर दिवाकर मलिक भावुकता से भर आए। वोले, "मेरे परिचितो मे कोई आदमी नही है, जो मेरा यह काम कर दे। आपको कोई सूझ रहा हो, तो वतलाइए।"

भूतपूर्व वकील और वर्तमान शिक्षा मन्त्री प्रकाश वावू जैसे उदास हो आए। मेज पर वार-वार दाहिने हाथ के अगूठे की वगल वाली उगली से न जाने कैसी-कैसी शक्लें वनाते रहे, फिर जैसे वुद्धत्व की प्राप्ति हो गई हो, मन्द स्वर मे वोले, "ज़माना वडा नाज़ुक है। आजकल किसी को अपना आदमी कहते हुए भी दिल धडकता है। लोग मलाई वनकर पेट मे घुसते हैं और तलवार वन कर वाहर निकलते हैं। मेरा हाल तो यह है कि हर महीने की इक्कीस तारीख से कर्ज़ लेना शुरु हो जाता है…मगर मेरा भतीजा कामदेव, जो इन दिनो जमशेदपुर मे ठेकेदारी करता है, उसके पास ज़रूर कुछ पैसे हैं। उसे कह कर देखता हू, राज़ी हो जाए तो वडी अच्छी वात है। आपका दिल क्या कहता है ? उससे चर्चा छेड़ू ?"

"मेरा दिल तो वही कहता है, जो आपका दिल कहता है।"

प्रकाश वावू ने कहा, "मगर वह है वडा काइया ! वह दखली इजारा चाहेगा।"

"दखली इजारा क्या होता है ?" दिवाकर मलिक ने पूछा।

प्रकाश वावू ने कचहरिया ज़ुवान मे समझाया, "दखली इजारे का मतलव यह हुआ कि रुपये लेकर मकान आप रुपये देने वाले को सुपुर्द कर दें। जव रुपये वापस करें, तो अपना मकान वापस ले लें। दखली इजारे मे यही हाल खेत के साथ भी होता है। इसमे सवसे वडा लाभ यह होता है कि सूद नही देना पडता।"

दिवाकर मलिक कुछ परेशान हो आए। बोले, 'प्रकाश बाबू, मेरे पास कोई दूसरा घर नहीं है।"

प्रकाश बाबू ने जैसे वास्तविकता के मुखड़े से परदा हटाते हुए कहा, 'दिवाकर बाबू, यह राजधानी का शहर है। यहां तेहत्तर प्रतिशत लोग किराये के मकानों में रहते हैं जिनमें वकील, डाक्टर, प्रोफेसर, बिजनसमैन और बड़े-बड़े अफसर शामिल हैं। आप परेशान न होइए। मैं आपको जनता फ्लैटों में से एक फ्लैट दिलवा दूंगा। किराया भी ज्यादा नहीं है। सिर्फ पचहत्तर रुपये ।'

कामदेव ठीक समय पर जमशेदपुर से आ गया था। रजिस्ट्री आफिस में पचासी हजार की रजिस्ट्री हो गई। प्रकाश बाबू ने दिवाकर मलिक को दस हजार की जगह बारह हजार रुपय दिलवाए थे। और उधर अपने भतीजे कामदेव से कहा था "चुपचाप दे दो। मकान समझो मेन रोड पर ही है। रिक्शे टमटम मोटरें—सब दरवाजे से गुजरती हैं। मकान जिस मौके पर है वहां ऐसा मकान खरीदना चाहो तो एकमुश्त पचास हजार रुपये निकालने पड़ेंगे। किराये पर भी लगा दोगे तो दो सौ रुपये मासिक मिलेंगे।

अब दिवाकर मलिक को शीघ्र ही घर से बेघर होना था।

19

सुरेश पाठक को अव तक मकान नही मिल पा रहा था, हालाकि वह मकान की तलाश मे लगे हुए थे। आफिम मे दोस्तो मे भी कह रखा था। दोस्तो ने यकीन दिलाया था कि वे कोई-न-कोई मकान दिलवा कर रहेगे। किन्तु इन वडे शहरो मे रहने वाले लोगो का जीवन वहुत भागदौड का जीवन होता है। मचाई यह थी कि लोग इस कान से सुनते और उम कान से उडा देते और याद दिलाने पर कहते, "मैं भूला नही हू। अपने मुहल्ले मे पडोसियो से भी कह दिया है। पता लगते ही मैं आपको अपने साथ ले चलूगा। देख लीजिएगा, तव 'हा' या 'ना' कहा जाएगा। आपका देखना जरूरी है।" गोया वे मकान दिलवा कर रहेगे।

इधर समाचारपत्रो मे आए दिन इम आशय के समाचार प्रकाशित हो रहे थे कि मायके से दहेज न लाने के कारण वहुत-सी नवविवाहिताओ को ससुराल वाले या तो जान से मार डाल रहे हैं या रोज़-रोज़ के व्यग्यो की चोट नही सह पाने के कारण वे आत्महत्या करने को वाध्य हो रही हैं। इस मम्वन्ध मे जो कानून वना था, वह कागज़ पर था और दहेज लेने-देने की शर्तें लोगो के दिलो मे थी। सरकार भी क्या करे! उसके वहुत सारे काम कागज़ के टुकडो पर ही पूरे हो जाते हैं। वाजार मे घोर मह्गाई रहती है, मगर कागज़ पर खाद्यसामग्रियो का मूल्य काफी गिरता हुआ साफ नज़र आता है। अकालग्रस्त क्षेत्र मे कोई गरीव भूख से मरता है, मगर सरकारी कागज़ वीच गगा मे खडा होकर चीखता है कि वह आदमी भूख से नही, वल्कि उदररोग से मरा है और समाचारपत्रो मे प्रकाशित समाचार को एकदम वेवुनियाद करार देता है। मन्त्रिमण्डल मे, जो शामन का सर्वोच्च अग है, रोज़ ही निर्णय लिया जाता है कि जमाखोरो और कालावाज़ारियो के खिलाफ सख्त कार्रवाई की जाएगी और इसी गति मे वाज़ार ने रोज आवश्यक उपयोग की वस्तुए गायव होती रहती हैं, काले वाज़ार मे और भी गहरी काली छाया उतरती जाती है। कागज़ के वडे-

[illegible] है [illegible] पुलिस [illegible] [illegible] मिल [illegible] इस अर्थ में [illegible] हैं कि दहेज [illegible] के बारे में [illegible] लोगों से भी [illegible] [illegible] — इसमें हम 'उपदेश' न करें।

सवाल था कि दहेज लेने वाले और देने वाले दोनों अगर पकड़े गए, तो जुर्माना और सजा के भागी होंगे और सेठ दामाद से रहा था देते समय इच्छा न रहते हुए भी दे रहा था। पर सो दाव पर लगाकर भी दिवाकर मलिक इस अर्थ में खुश थे कि बागेश्वरी कुंवारी नहीं रहेगी। उसे कोई लेकर भाग नहीं जाएगा। कल्याणी को लेकर जो बदनामी हुई वह आखिरी बदनामी साबित होगी।

चारुचन्द्र जी ने सलाह दी थी कि इतनी बड़ी रकम घर में रखना ठीक नहीं। सब लोग जान गए हैं कि मकान गिरवी रखा गया है और काफी रुपये मिले हैं। रुपये बैंक या डाकघर में रख दिए जाएं तो अच्छा रहेगा। दिवाकर मलिक को यह सुझाव पसन्द आया था। मगर शोभाकान्त दुबे हर चौथे रोज पूछवा रहे थे कि शादी करनी है या नहीं, अगर करनी है तो साफ बतलाएं। यहां तीन लोग रिश्ते के लिए [illegible] मिट्टी कुरेद रहे हैं। रुपये मिल गये थे इसलिए चौथे ही दिन शाम के समय दिवाकर मलिक शोभाकान्त दुबे से मिलने पहुंच गए। शोभाकान्त घर पर नहीं था। अभी आध घण्टा पहले कचहरी से लौटा था और जलपान करके कहीं निकल गया था।

शोभाकान्त दुबे बहुत दूरदर्शी आदमी थे। दिवाकर मलिक के चेहरे पर हड़बड़ी देखकर भांप गए कि मालिक की अब [illegible] नहीं है। [illegible] उपरान्त फौरन बोले, "इसलिए, हम [illegible] भी जान आते हैं। एक साहब अभी [illegible] मए हैं। पन्द्रह हजार जमा रहे थे। [illegible] कोई जवान हानी है। जब तक आप [illegible]

नही होने वाला हू। लडके लडकी के पवित्र बन्धन की बात है, कोई गुड्डे-गुडिया का खेल नही है।"

"चला जाए।"

होटल साधारण किस्म का था, मगर नाश्ते वगैरह की सामग्रिया अच्छी मिलती थी। मिठाइया आलमारी मे बन्द रहती थी। उन पर मक्खिया कलाबाजी नही खा सकती थी। शोभाकान्त सीधे हाल मे आगे ही बढते चले गए और सौभाग्य से उन्हें मनोनुकूल स्थान भी मिल गया। कोने मे एक मेज़ और दो कुर्सिया। आसपास कोई ग्राहक नही। दिवाकर मलिक को वही बैठने का सकेत करते हुए होटल के पन्द्रहवर्षीय नौकर को बुलाया और बडे रोब मे कहा, "मेज़ साफ करो। क्या समझते हो, हम लोग ऐसी गन्दी जगह मे खाना खाते हैं?"

नौकर कपडे का एक गन्दा टुकडा भिगो कर फौरन ले आया और मेज को पोछने लगा। पोछ लेने के बाद उसने पूछा, "क्या लावें, हुजूर?"

शोभाकान्त ने पहले दिवाकर मलिक की ओर देखा, फिर बायें हाथ को पेट पर ले जाकर कहा, "मेरी तो कुछ भी खाने की इच्छा नही है। दो घण्टे से खट्टी डकारें आ रही हैं। चाय पी लू, वही बहुत है।"

नौकर ने अपनी दृष्टि दिवाकर मलिक की ओर डाली। शोभाकान्त दुबे ने कहा, "हा हा·· आपके लिए ले आओ। जो कहे ले आओ, पहले बतलाओ कि कौन-कौन-सी मिठाइया ताज़ा हैं?"

नौकर पर दुबे जी का रोब पहले ही गालिब हो चुका था। बेचारा डरा। मिठाइया सारी बासी थी। तब तक दिवाकर मलिक बोल पडे, "मुझे डकारें तो नही आ रही, मगर कुछ खाने की इच्छा नही है।"

शोभाकान्त दुबे ने बडी शीघ्रता मे उनके मुह की बात छीनते हुए कहा, "ओह, तब कुछ न खाइए। मेरी बात रखने के लिए कुछ खा लीजिएगा और पीछे डाक्टर की जेब भरिएगा। आयुर्वेद शास्त्र मे भी कहा गया है कि ।"

यानी इस प्रकार बात सिर्फ चाय पर ही बन गई। दिवाकर मलिक ने कहा, "आपने दस हजार की माग की थी, मैं तैयार हू। अब ऐसा कीजिए कि यह यज्ञ शीघ्र ही पार लग जाए।"

शोभाकान्त दुबे ने कुछ सोचने का अभिनय पूरा कर कहा, "आप ठीक चाहते हैं तो मैं उसके लिए भी तैयार हूं। मगर एक बात ध्यान दीजिए।

दिवाकर मलिक ने पूछा "कौन-सी बात ?

शोभाकान्त कुछ गम्भीर हो गए और फुसफुसा कर बोले "मैं नहीं चाहता कि हम दोनों समधी बनने के पहले ही बड़े घर की हवा खाने चले जाएं। हालांकि आपसे मुझे जो कुछ मिलेगा उसमें मुझे घर में भी दस-बारह हजार मिलाना ही पड़ेगा। मगर, सरकार पीछे पड़ जाएगी जो तिलक-मण्डप में आपने एक रुपया और पान-सुपारी के अलावा और कुछ दिया। समझ लीजिए कि घोर कलिकाल आ गया है। प्रलय होने में ज्यादा दिन नहीं हैं। सच्चा तो मर जाता है और झूठे को बुखार तक नहीं लगता।"

"आप जैसा कहें मैं हाथ जोड़ कर वैसा करने को तैयार हूं।

शोभाकान्त दुबे ने अपना प्रस्ताव रखा "मलिक जी अगर आपको मुझ पर विश्वास हो तो ये दस हजार रुपये मुझे चुपके से दे दीजिए। किसी को कानोंकान खबर न होने पावे। सुना है, सरकार ने हर मुहल्ले में तीन-तीन खुफिया तैनात कर दिए हैं और उन्हें गिरफ्तार करने का भी पावर मिला हुआ है। अपना मणिकान्त तो दिन भर, आप जानते हैं दिन भर कचहरी में ही रहता है। पुलिसवालों से उसका रोज मिलना-जुलना होता रहता है। वैसे मुझे क्या मालूम यह बात मणिकान्त ही बतला रहा था।

दिवाकर मलिक ने अपना भार उतारना ही ठीक समझा। कौन रात रात भर जग कर सुबह का मुंह देखे। उन्होंने उसी रात नौ बजे के समय अपने भावी समधी को घर पर बुला लिया और बाहर का दरवाजा बन्द कर दस हजार रुपये उनके आगे रख दिए। शोभाकान्त दुबे इस बात का वचन देते हुए फौरन निकल पड़े कि "अगले पन्द्रह दिनों में मंगल का —— और उपायन अवश्य हो जाएगा। भगवान हमारी सहायता करें।"

र कोर्ट हो, हाईकोर्ट अथवा सुप्रीम कोर्ट—इन तीनो अदालतो मे एक-
रेकार्ड रूम रहता है। इसमे चल रहे मुकदमो की फाइले रहती हैं और
ख के मुताबिक हर इजलास मे जिम मुकदमे की सुनवाई होने वाली
है, उमकी फाइलें सम्बन्धित इजलाम के पेशकार के पास भेज दी
हैं और उसी रोज़ शाम को या दूसरे रोज़ वापस मगा ली जाती हैं।
रेकार्ड रूमों मे उन मुकदमो की फाइलें भी सुरक्षित रहती हैं, जिनके
हो चुके रहते हैं। इस के प्रभारी को 'रेकार्डकीपर' कहते हैं।

पेशकार के रूप मे मणिकान्त की अच्छी आमदनी थी। वह मुकदमे-
को खुश रखता और दोनो पक्षो मे अच्छी-खासी रकम वसूलता था।
लोग लम्बी तारीखें चाहते, उनमे कुछ ज्यादा वसूलने के इरादे से
ा, "मुकदमे वहुत ज्यादा हैं। हाकिम जल्दी निपटाने के पक्ष मे रहते
पन्द्रह दिन मे ज्यादा आगे की तारीख डालना ठीक नही।"

जब मुवक्किल दो रुपये के वदले पाच या दस उसे थमा देता, वह
ा, "खैर, ताली दोनो हाथो मे वजती है। आप क्या चाहते हैं?"

"कम-से-कम दो महीने आगे की तारीख डाल दीजिए।"

"जाइए, मौज कीजिए। आज 2 मार्च है, 18 मई को आइए।"

और, जो कोई मुकदमा जल्दी खुलवाने के इरादे से नज़दीक की
ख चाहता, तो उससे कहता, "हाकिम वहुत कडे स्वभाव के हैं। कहते
क ही मुकदमे को हमे लेकर नही चलना है। गाडी सबो की आगे
ी चाहिए। थोडी लम्बी तारीखें लगाया कीजिए।"

"मगर पेशकार साहव, मेरे लिए तो आप ही हाकिम हैं।"

"अभी नही, साहव, मैं हाकिम होता, तो हाकिम की कुर्सी पर न
ा? क्या करू, इन लोगो के मिज़ाज को देख कर चलना पडता है।
-सी चूक हुई कि नौकरी से हाथ धोना पडेगा।"

"ऐसा नही हो सकता," मुवक्किल का मुशी कहता है, "मणिकान्त

बाबू ने 'काम भी इसी अदालत में मुकर्रर हुए हैं। मेरा मन न करे, मगर मैं तो यह जानता हूँ कि पेशकार बाबू साहब बड़ा हर्ज़ीन हैं। इसलिए पन्द्रह रोज़ आगे की तारीख़ लगा दीजिए।" फिर एक हाथ से पान का मुवक्किल को आदेश देता है "सरकारी वकील से कहिए पेशकार साहब का पाँच रुपया। क्या रखा है इसमें? देर न कीजिए।"

मणिकान्त इस सनातन मनोवृत्ति का हिमायती है। कहता है "हर आदिट पार्टी का आदमी भी आ रहा होगा।

मुवक्किल जब पाँच रुपये का नोट थमा देता है तो मणिकान्त उसे जब से हुज्जत कर कहता है 'आठ आने और दीजिए।

"यह काहे का मुवक्किल पूछता है।

"चपरासी का।"

'हाँ-हाँ दीजिए। वकील का मुंशी ललकारता है।

और आठ चार बजे मुवक्किल को पता चलता है कि असली तारीख़ बीस पड़ी है। आज चार तारीख़ है। वह सन्तुष्ट होकर घर लौटता है।

अदालत का यह सवा-सा पेशकार फाइल पर चार पंक्तियाँ में कुछ लिखता है, तो उसमें हिज्जे और व्याकरण की भूलें पाँच से कम तो कभी नहीं होंगी मगर अपनी हरामखोरी के क्षेत्र में स्पष्ट ही कभी कोई गलती करता है। वह इस चक्कर में लगा रहता है कि जहाँ से हो सके जैसे भी हो सब जन की तरावट बनी रहे। उसके पास तो दोनों प्रकार के मुकदमे सुनवाई के लिए आते हैं – दीवानी और फौजदारी। इसलिए वह वकीलों का भी ख़ास है और पुलिस की ओर से मुकदमे पेश करने वाले कोर्ट बाबुओं से भी आर्थिक सम्बन्ध स्थापित रहता है। इस तरह कुछ ऊपरी आय वकीलों से हो जाती है और कुछ कोर्ट बाबुओं से। यानी वह दोहरी आमदनी के घोड़े पर चढ़ा रहता है और खुशी से झूमता है।

लेकिन कभी-कभी विधाता का गुप्तचर विभाग बहुत सतर्क हो जाता है और एक-न-एक रोज़ मास्टर चाबी में फिर जाते हैं। जैसा कि तय हुआ था दिवाकर मलिक पान-सुपारी और एक स्थानीय नगर का लिफ़ाफ़ा लेकर सामाकान्त दुबे के यहाँ उपस्थित भी न हो सका कि शहर के प्रसिद्ध समाचारपत्र के प्रथम पृष्ठ पर यह समाचार पढ़ने को मिला

'होटल मे अदालत का पेशकार रगे हाथ गिरफ्तार !'

अघेर नगरी, 13 मार्च। कल एक होटल मे स्थानीय जिला अदालत के सवजज दोयम का पेशकार मणिकान्त दुवे निगरानी पुलिस द्वारा घूस लेते हुए रगे हाथ गिरफ्तार कर लिया गया। पुलिस सूत्रो से ज्ञात हुआ है कि वह कोई अत्यावश्यक सवूत का कागज़ फाइल से निकाल कर प्रतिवादी के हवाले कर रहा था, ताकि लिखित प्रमाण के अभाव मे प्रतिवादी मुकदमा जीत जाए। सवूत का कागज़ उसकी जेव मे था और वह प्रतिवादी पक्ष के साथ इस काम को निपटाने के लिए होटल मे आया था। जैसे ही एक हजार रुपये लेकर वह सवूत का कागज अपनी जेव से निकालने लगा कि सादी पोशाक मे आसपास वैठे हुए निगरानी अधिकारियो ने उसे अपने घेरे मे ले लिया। सौ-सौ के दस नोटो पर मजिस्ट्रेट के हस्ताक्षर थे।

दूसरे दिन इसी सिलसिले मे यह समाचार भी पढने को मिला कि न्यायिक दण्डाधिकारी ने ज़मानत की अर्ज़ी नामज़ूर कर दी। अभियुक्त को केन्द्रीय कारा भेज दिया गया।

दिवाकर मलिक तो वडी मुश्किल से अपने आसू रोक सके, लेकिन उनकी पत्नी दमयन्ती चीखकर रो पडी। उन्होंने चाहा कि यह वात वागेश्वरी के कानो तक न पहुचे, पर लडकपन मे पूर्वी ने मौका देखकर वागेश्वरी को सव कुछ वतला दिया। वैसे भी वह मा-वाप की वेदना से अवगत थी। रोटियो के लाले तो पड़ ही रहे थे, यह घर भी हाथ से निकल गया था। उसे मालूम था कि प्रकाश वावू ने वडी दया करके कहा है कि मलिक जी, पहले आप कन्या का विवाह कर लें, तव घर खाली कीजिए।

वागेश्वरी का भावुक हृदय रो पडा। 'हाय! भविष्य कितना सूना और अन्धकारमय है। मैं तो व्याह के वाद पति के घर चली जाऊगी और मेरी वहन तथा मा-वाप किराये के घर मे रहते फिरेंगे। हर माह वावूजी किराये की रकम कहा से जुटा सकेंगे? मैंने और मेरी ज़िन्दगी ने वावूजी से कितना महगा मोल वसूला है!'

कोठरी वन्द कर वागेश्वरी रोने लगी और दिवाकर मलिक कुछ सोचकर चारुचन्द्र के घर चल पडे। लगता था, उनके अग-अग मे कोई सुइया चुभो रहा है। कदम लडखडा रहे थे।

शोभाकान्त दुबे ने जमीन-आसमान के कुलाबे मिला दिए। मगर उच्च न्यायालय तक ने मणिकान्त को छोड़ना मुनासिब नहीं समझा। मुकदमा सनसनीखेज था और समाचारपत्र वाले प्रत्येक कार्यवाही की सूचना लगातार प्रकाशित कर रहे थे।

पड़ोस में रोज समाचारपत्र लिया जाता था। बागेश्वरी पूर्वी से वह समाचारपत्र दस मिनट के लिए मंगवाती अपने भावी पति के सम्बन्ध में प्रकाशित समाचार पढ़ती और जहां भी एकांत मिलता बैठकर जी भरकर रोती थी। इसी क्रम में उसने मां-बाप को धीमे स्वर म बातें करते सुना। दमयन्ती बोलीं "इस अपराध म सुना है लम्बी सजा होती है।"

दिवाकर मलिक ने कहा 'सुना तो मैंने भी है। एक आदमी कह रहा था कम-से-कम तीन साल तो जरूर।"

"हमारे लिए तो तीन साल तीस हजार साल के बराबर होंगे।"

दिवाकर मलिक को इधर किसी ने बतला दिया था कि सजा हो जाने के बाद इस जन्म में सरकारी नौकरी नहीं मिल सकती। मणिकान्त कोई राजनीतिक कैदी तो होगा नहीं। फौजदारी मुकदमों में सजा पाया हुआ आदमी चुनाव तक नहीं लड़ सकता। सो उन्होंने यही बात दमयन्ती से भी कही। अब तो दमयन्ती की रही-सही आशा पर भी तुषारापात हो गया। आंखों के आगे तारे छिटकने लगे।

बागेश्वरी प्रकटतः इस विपत्ति के सम्बन्ध में कुछ बोल नहीं सकती थी। वह कुछ खास वातावरण मे पली थी। वह उन आधुनिक युवतियों में नहीं थी जो बड़ी बेशरमी से अपनी शादी की समस्याओं में हिस्सा बटाया करती हैं अपने और भावी पति के लिए जेवर और कपड़े पसन्द किया करती हैं। वह उन युवतियों में नहीं थी जो वासना के कीचड़ में पग जाने पर अन्तरजातीय विवाह कर लेती हैं और अपने ब्याह को एक आदर्श विवाह मानती हैं। वह प्रेम-विवाह रचाने वाली उन आधुनिकाओं म तो

कभी हो ही नही सकती थी, जो फेरे पडने से महीनो पहले चुपके-चुपके अनगिनत सुहागरातें मना चुकी होती हैं। वह सचमुच ईसा की बेटी थी — तन और मन मे अस्पर्शित धूपवत्ती की भाति पवित्र। सिक्के के किसी भी पहलू मे कोई दाग नही था।

सुबह के साढे सात बज रहे होंगे। दिवाकर मलिक की सारी बातें सुनकर चारुचन्द्र ने कहा, "अब नैतिकता तो यही कहती है कि शोभाकान्त दुबे आपके रुपये लौटा दें।"

"हा, वही तो मैं चाहता था। प्रकाश बाबू के भतीजे को रुपये लौटा दिए जाए, वरना घर छोडकर किराये के मकान मे जाना पडेगा।" दिवाकर मलिक ने कहा।

दोनो रास्ते मे बातें करते हुए चले जा रहे थे।

राजधानी का शहर!

वही शोरगुल, वही भीडभाड। सवारियो की आवाज़े। लोग आ-जा रहे थे। छोटी-छोटी दुकानो के फाटक खुल रहे थे, बडी दुकानो के शटर उठ रहे थे। चलते-चलते ये दोनो मणिकान्त के क्वार्टर के सामने आ खडे हुए और पुकारा, "शोभा बाबू, ओ शोभा बाबू?"

पुकारने का काम चारुचन्द्र ने किया था।

एक दस-बारह साल का लडका भीतर से निकला। उसने बाहर वाले कमरे की ओर इशारा कर कहा, "आप लोग बैठिए। नाना जी पूजा पर बैठे हैं। अभी आ जाएगे।"

दोनो बाहर वाले कमरे मे चारपाई पर जा बैठे। वातावरण मे सूनापन था, उदासी थी। लगभग पन्द्रह मिनट बाद शोभाकान्त दुबे खाली बदन धोती लपेटे हाज़िर हुए। ललाट पर त्रिपुण्ड जैसे चमक रहा था। दिवाकर मलिक पर दृष्टि पडते ही रुआसे हो आए और बोले, "क्या बतलाऊ, समधी साहब, हम तो लुट गए! अब तो किसी को कर्ज़ देना भी गुनाह है। सुना है, ईश्वर समदर्शी है, मगर मुझे तो लगता है कि उसके मुकाबले का अन्धा कोई दूसरा न होगा।"

"कर्ज देना गुनाह है ?" चारचन्द्र के मुंह से निकला।

बगल में एक छोटी-सी कुर्सी पड़ी थी उस पर बैठते हुए सोमाकान्त दुबे ने कहा "जी कविवर, कर्ज नहीं तो और क्या ! जिसने मणिकान्त को खा दिया है उसे नरक में भी जगह नहीं मिलेगी। मणिकान्त ने उसे भला आदमी समझ कर बिना लिखा-पढ़ी के हजार रुपये कर्ज दे दिए थे। मुझे भी नहीं बतलाया। अब जो ब्याह तय हो गया तो रुपयों की आवश्यकता पड़ी। आप जानते ही हैं ब्याह-शादी में रुपयों के हाथ-पांव हो जाते हैं। सौ का नोट तो बस बात में छींक के बराबर होता है। बहू को देने के लिए मैं एक हार पसन्द कर आया था। इसकी भनक मणिकान्त को लग गई"।

चारचन्द्र बोले "यार, आपके दुख में हम कोई कम दुखी नहीं हैं। लेकिन दिवाकर बाबू भी मामूली परेशानी में नहीं हैं।

सोमाकान्त दुबे ने बड़ी जल्दी में कहा "मैं परेशानी में न पड़ूँ। अब मणिकान्त इनका है। मेरे साथ इनके रिश्ते का धागा अब टूटने वाला नहीं। यह ब्याह होकर रहेगा।

चारु बाबू ने भावी स्थिति को स्पष्ट करते हुए कहा 'भगवान न ऐसा करे मगर फर्ज कर लीजिए कि मणिकान्त को सजा हो जाती है फिर क्या होगा ? आपने तो कभी नहीं कहा था कि मणिकान्त बैठता तो है किरानी की कुर्सी पर, मगर उसकी मासिक आमदनी की पूंछ को जज साहब भी नहीं छू सकते लिहाजा दस हजार नकद मैं कुछ ज्यादा नहीं मांग रहा हूं।' दिवाकर बाबू ने सोचा और मैंने भी कहा कि चलो भाई, लड़की सुख से रहेगी।"

सोमाकान्त दुबे ने भूतकाल को वर्तमानकाल का रूप देते हुए कहा, "हां हां दिवाकर बाबू का सोचना और आपका कहना उचित है। एक तो सजा होगी नहीं क्योंकि हम हाईकोर्ट तक लड़ेंगे और मान लीजिए, जो सजा हो भी गई, तो मणिकान्त प्रतापी पुरुष है। जेल से छूटकर यह व्यापार करेगा। उसने ऐसे नक्षत्र में जन्म लिया है कि लक्ष्मी उससे चिपकी रहेगी।"

"मुकदमा चलने और फैसला होने में जाने कितने वर्ष लगेंगे। तब तक

लडकी क्वारी वैठी नही रहेगी।" चारुचन्द्र बोल पडे।

इतना सुनते ही शोभाकान्त दुवे ने पैतरा वदला। कुछ ऊचे स्वर मे वोले, "तो साहव, कौन कहता है कि लडकी क्वारी वैठी रहे? आप जहा चाहे, उसे व्याह दें। हमारी-आपकी तो अभी वातचीत चल रही है। शादिया तो विवाह-मण्डप तक से टूट जाती हैं। मेरे जानते मे तीन वारातें कन्या के दरवाज़े मे लौट चुकी हैं। शादी-व्याह का मामला कोई हसी-खेल थोडे ही है! दोनो पक्षो की पूरी रज़ामन्दी के विना यह हो ही नही सकता।"

"जी हा, जी हा।" दिवाकर मलिक इस समय पहली वार वोले।

शोभाकान्त दुवे का स्वर चढता-उतरता रहा, "अव ज़माना ऐसा है कि विना कन्या को देखे वरपक्ष वचन नही देता। मगर, हमारी ओर से ऐसी कोई वात नहीं कही गई। मैंने इसे ठीक नही समझा। मैं तो सोचता हू, जैसी मेरी कन्या, वैसी दूसरो की कन्या। कन्याए क्या कोई गाय-भैंस हैं, जो देखा-परखा जाए? इसी तरह यदि वे भी कहे कि हम वर को देखे विना व्याह नही करेंगी, तो हमें कैसा लगेगा? हम तो वुरा मान जाएगे और कहने लगेंगे कि कन्या विलायती लडकियो के रास्ते पर है, भैया! यह तो जिस दिन हमारी देहरी के भीतर पाव डालेगी, उसी दिन हमारे वाप-दादे की वनी-वनाई इज़्ज़त माटी मे मिल जाएगी।"

दिवाकर मलिक तो शोभाकान्त दुवे का भाषण सुनते रहे, मगर चारुचन्द्र ऊवने लगे। वह मुख्य विन्दु पर उन्हे लाना चाहते थे। वोले, "दुवे जी, आपके विचार वडे उत्तम और अनुकरणीय हैं। आप गृहस्थाश्रम मे हैं, मगर आप सोलहो आने महात्मा हैं। अव आप ऐसा कीजिए कि दिवाकर वावू के दस हज़ार रुपये लौटा दीजिए। इन्होंने वडी महगी शर्त पर ये रुपये उधार लिए हैं। फिलहाल इनके हक मे यही अच्छा होगा कि ये कर्ज़ के रुपये लौटा दें। आप जानते ही हैं कि शरीफ आदमी के लिए कर्ज़ कितना वडा वोझ होता है।"

शोभाकान्त दुवे को लगा, जैसे पूरा हिन्दुस्तान वडी तेज़ी से चक्कर लगा गया। मगर वह भी ऐसे हार मानने वाले नही थे। कुछ धीमे स्वर मे वोले, "इस समय तो चाहिए कि दिवाकर वावू मेरे दुख मे साथी वनें।

रुपया ही सब कुछ नहीं है। मैं तो इसे हाथ का मैल समझता हूं। मणिकान्त फंस में है। मुकदमा संगीन है। बात-बात पर रुपये खर्च हो रहे हैं। चारु बाबू इन्हें परेशान होने की जरूरत नहीं। मेरे मार्फत कर्ज लिया है तो सूद देना पड़ेगा यही तो ? सरकारी दर पर ये मुझसे रुपये लेकर सूद अदा कर दिया करें। साल भर का सूद मैं पहले देने को तैयार हूं। कहिए, दिवाकर बाबू ?"

चारुचन्द्र तो दिवाकर मलिक की स्थिति जानते थे। बोले "इन्हें सरकारी दर से सूद नहीं देना है। इन्होंने अपना मकान जमानती इकरार पर रखा है। रुपया देने वाले ने कृपा करके कुछ दिनों की मुहलत दे दी। मामला कन्या के विवाह का था बस। कन्या का विवाह तो रुक ही गया। अब कुछ दिनों के अन्दर इन्हें मकान खाली करके किराये के मकान में आ जाना पड़ेगा। यानी या तो ये दस हजार रुपये लौटाएं या मकान छोड़ें। और जान लीजिए कि यह सब रजिस्ट्रेशन आफिस में हुआ है। कर्ज देने वाले का हाथ कानूनन मजबूत है। वैसे भी दिवाकर जी कलाकार ठहरे। कचहरी और थाने को नरक का बड़ा और छोटा दफ्तर मानते हैं।

"मानना ही होगा ।" शोभाकान्त बोले। उनका परोपकार प्रवाह मानो शोभाकान्त दुबे उनके भीतर फिर से प्रवेश कर गया। उन्होंने उसी शोभाकान्त दुबे की बुद्धि का उपयोग करते हुए कहा "मैं कचहरी और थाने में विश्वास नहीं करता। दिल साफ रहना चाहिए। इस समय मेरा फर्ज तो यही था कि अगर मैं सचमुच इनसे रुपये लिए होता तो फौरन लौटा देता ।"

चारुचन्द्र चौंके। पूछ बैठे "तो क्या ये झूठ बोल रहे हैं ?

सरासर !" शोभाकान्त दुबे ने कहा बेचारे जान ही गए हैं कि मणिकान्त फंस गया है। फिर सोच रहे हैं क्यों न इस स्थिति का लाभ उठाया जाए ? पुलिस की नजरों में इस समय शोभाकान्त अपराधी है। इसी बहाने बेचारे मुझसे दस हजार ऐंठना चाहते हैं। और आप भी इस मक्कार, बेईमान के चक्कर में पड़ कर मेरे पास चले आए। सोचने की बात है दस हजार रुपये कोई यों ही चुपके से पकड़ा देगा ? पुलिस और कानून का डर था कि दहेज की रकम कैसे गुमनाम दी जाए ? ठीक है। मगर

आप पर तो ये मुझसे ज्यादा विश्वास करते हैं। रुपये देते समय आपको अपने घर मे क्यो नही बिठाया, आपके सामने रुपये क्यो नही दिए ? मैं मैं तब से इनकी इज़्ज़त बचाने के लिए 'हा-हा' किए जा रहा हू और तब भी ये सचाई को ज़ाहिर नही कर रहे हैं। होंगे ये कलाकार अपने घर मे, मगर मैं तो इन्हे मुल्क का सबसे बडा ठग ही समझ रहा हू ··हरे कृष्ण, हरे कृष्ण ! अब प्रलय होने मे ज़्यादा दिन नही लगेंगे—हाय, हाय, 'मन मलिन तन सुन्दर ऐसे, विषरस भरा कनकघट जैसे'।"

चारुचन्द्र की बुद्धि को जैसे लकवा मार गया। कुछ ग्लानि भी होने लगी। फिर भी उन्होंने दिवाकर मलिक से पूछा, "दिवाकर जी, क्या शोभाकान्त जी का कहना सही है ?"

दिवाकर मलिक को कमज़ोरी महसूस होने लगी। वह वास्तव मे एक शब्द भी नही बोल सके। चुपचाप शोभाकान्त दुबे को निहारते रहे। पाच मिनट तक यही हाल रहा। अन्त मे चारपाई से उठते हुए दिवाकर मलिक ने इशारे से चारुचन्द्र जी को कहा, "चलिए।"

बाहर निकल कर दिवाकर मलिक का पसीना छूटने लगा। उन्हे गश आ गया। चारुचन्द्र ने फौरन रिक्शा किया और उन्हे उनके घर ले आए। दमयन्ती को फुसफुसा कर कुछ समझाया। स्वय दौडते हुए पडोस के एक डाक्टर के पास गए।

पूर्वी और वागेश्वरी दोनो भीतर से भागती हुई पिता के पास आईं। वागेश्वरी पर नज़र पडते ही दिवाकर मलिक को जैसे होश आ गया। वह फूट-फूट कर रोने लगे।

शोभाकान्त दुबे ने एक निश्छल कलाकार के दिल में कैसी भयानक आग सुलगा दी थी, कहना नहीं पड़ेगा। दिवाकर मलिक की मानसिक स्थिति कुछ पागल जैसी हो गई थी और इस पागलपन की स्थिति में वह प्रातः आठ बजे ही प्रकाश बाबू की कोठी की ओर चल पड़े। उनसे मिलकर वह बस इतना ही निवेदन करना चाहते थे कि अभी उनसे मकान न खाली कराया जाए।

पिछले दिन दस बजे जब चारुचन्द्र डाक्टर को लेकर आए थे तो बागेश्वरी को जोर देकर दिवाकर मलिक के पास से हटा दिया था। और बागेश्वरी थी कि किवाड़ की ओट में छिपकर सब कुछ सुन रही थी।

डाक्टर ने जांच करके कहा "इन्हें किसी बात का गहरा सदमा पहुँचा है। इनके साथ खूब प्रेमपूर्ण व्यवहार किया जाना चाहिए। आप लोग कुछ बतलाइए तो सही कि सदमा किस बात का पहुँचा है ?"

उत्तर में धीरे-धीरे चारुचन्द्र ने डाक्टर को वास्तविकता बतला दी। इधर बागेश्वरी ने सब कुछ जान-सुन लिया। मगर, सबों के सामने वह अपने को अनजान ही बनाए रही।

दिन बीता रात बीती। सुबह हुई।

दस बजे गए। दमयन्ती ने पति की बड़ी प्रतीक्षा की मगर वह नहीं लौटे। पूर्वी के स्कूल जाने का समय हो गया था। दमयन्ती का हाल कुछ अच्छा नहीं था। किन्तु धर्मपरायण नारी घोर विपत्ति में भी अपने धार्मिक कर्त्तव्यों से विमुख नहीं होती। वह गंगास्नानार्थ घण्टे भर से तैयार थी। अन्त में उन्होंने पूर्वी को स्कूल जाने दिया और बागेश्वरी से कहा 'बेटी मैं गंगा जी जा रही हूं। बाहर का दरवाजा बन्द कर लो। तुम्हारे पिताजी आ ही रहे होंगे। आवें तो बतला देना गंगास्नान को गई हैं। जल्द ही लौट आएंगी।"

'अच्छा माँ तुम जाओ।"

पूर्ती स्कूल चली गई। दमयन्ती ने गगाघाट का रास्ता पकडा। वह चुपचाप चली जा रही थी और सोचती जा रही थी कि अव क्या होगा ?

इधर घर विलकुल सूना था। वागेश्वरी पहले थोडी देर टहलती-फिरती रही। फिर वैठकर रोने लगी। इस समय उसे चुप कराने वाला या ढाढम वधाने वाला घर मे कोई नही था। एकाएक वह उठी। दौडकर वैठक मे घुसी। उसने कुण्डी की जाच की कि वह ठीक से लगी तो है। जव उसे मन्तोप हो गया, तो लौटी। फिर न जाने क्या मन मे आया। वडी तेज़ी मे वैठक मे गई और मेज़ पर रखे पापाणनिर्मित वालकृष्ण की मोहिनी मूरत को उठा। लाई। इमके वाद कमरे मे घुस गई और भीतर से दरवाज़ा वन्द कर लिया। अव चारपाई पर जा वैठी। वालकृष्ण की मूरत उसके वायें हाथ मे थी। धीरे-धीरे उसका गौर मुखमण्डल काला पडने लगा। उसके कोमल तलवो मे एक प्रकार की सनसनाहट पैदा होने लगी। उसने वडी तेज़ी से छत की ओर देखा।

उपस्थित दर्शकों से भले ही अपनी-अपनी आँखों पर काली पट्टी चढ़ा रखी है पर चूंकि वे 'युद्ध कथा के प्यासे' हैं अतः प्राचीन नाट्यशास्त्रानुसार मंच पर वीभत्स रस वाला दृश्य नहीं कार्यान्वित किया जा रहा है। नैरेटर केवल नेपथ्य से सूचना देता है।

उधर से गंगास्नान कर दमयन्ती लौटीं और उधर से दिवाकर मलिक। दोनों घर के दरवाजे पर एकसाथ मिले। दरवाजा भीतर से बन्द था। दोनों बारी-बारी से दस्तक देते रहे चीख-चीखकर पुकारते रहे पर दरवाजा नहीं खुलना था नहीं खुला। दिवाकर मलिक ने गलियारे में जाकर झांका। जिस कमरे में कादम्बरी मोती बैठी मरती थी उस कमरे में झांकने की प्रेरणा मिली। खिड़की बन्द थी। हाँ एक छोटा-सा आड़ा-तिरछा सूराख अवश्य था। दायीं आँख बन्द कर बायीं आँख को उस सूराख पर सेट करके जो कुछ देखा वह चीखने चिल्लाने और रुलाने के लिए काफी था। पर, समय ने उन्हें कठोर और चालाक दोनों बना दिया। यह गली आम रास्ता नहीं थी। इस ओर अनुपयोगी पौधों की झाड़ियाँ थीं और पीछे की ओर गड्ढों का सिलसिला था। इस स्थिति में दिवाकर मलिक ने लाभ उठाया। शारीरिक बल की दृष्टि से वह क्षण भर में भीम बन गए। दो-तीन झटकों में खिड़की उखाड़ डाली और उछल कर कमरे के भीतर घुस गए। फिर खिड़की को यथास्थान सेट किया हालांकि हल्की हवा-भाप से वह गिर सकती थी।

अब वह बाहर की ओर दौड़े और भीतर से दरवाजा खोल दिया। दमयन्ती भीतर प्रवेश कर गईं। दिवाकर मलिक ने दरवाजे को बन्द करते हुए कहा "कोई भी पुकारे कहना बाहर गए हैं। पड़ोस की कोई औरत भी भीतर न आने पाये। चलो अब यह भी भुगतना है।

दमयन्ती के पाँवों से जैसे सांप लिपट गया। उन्होंने पूछा "यह क्या बोल रहे हो? क्या हो गया?

दिवाकर मलिक ने एकदम खामोश रहने का इशारा करते हुए कहा, "वागेश्वरी ने फासी लगा कर आत्महत्या कर ली है। अपने कमरे मे अभी उमी हालत मे है। चलो, गाठें खोल कर उसे उतारें। लगता है, शोभाकान्त दुबे ने जो मुझे दगा दिया, वह सब कुछ इसे मालूम हो गया।"

दमयन्ती पत्थर बन गई। यह सब कुछ सिर्फ रमोला के घर वालो को मालूम हुआ। उन लोगो ने पूरी गोपनीयता बरती और उन लोगो के सहयोग से ही, डाक्टर की मदद लेकर, मुहल्ले वालो को बतलाया गया कि वह भयानक पेटदर्द मे चल बसी। अर्थी को लेकर बहुत थोडे लोग निकले। शाम के चार बज चुके थे। स्वय पिता ने पुत्री को मुखाग्नि दी। चिता धधक उठी। गगा का किनारा। चीलें और कौवे चिता के ठीक ऊपर आसमान मे पख फैलाए चक्कर लगा रहे थे।

नेपथ्य से माइक्रोफोन गूंज रहा है।

दिवाकर सचिव ने प्रकाश बाबू का अपनी पुत्री वागेश्वरी की मृत्यु के विषय में बतलाते हुए कहा "मौत को तो बस एक बहाना चाहिए। पेट में दर्द हुआ और देखते-देखते बच्ची शान्त हो गई।"

सुनकर प्रकाश बाबू बोले "हां भई आपने सुना ही होगा हमारे उपराज्यपाल मन्त्री अनमुनबाला महिला सिलाई केन्द्र का उद्घाटन करने जा रहे थे। बड़े प्रसन्न थे। पता चला कार में चले ही जा रहे थे कि कुछ बेचैनी महसूस करने लगे। पसीना छूटने लगा। बेचारे उद्घाटन भी न कर सके और अस्पताल में भर्ती होना पड़ा। आठ रोज तक डाक्टरों ने पलंग से उतरने नहीं दिया।

"बड़ा खर्च आया होगा इलाज पर ?

"खर्च तो खैर नहीं आया। सरकार की ओर से सारी व्यवस्था थी। वी॰ आई॰ पी॰ ठहरे न।" शिक्षा मन्त्री प्रकाश बाबू ने कहा।

इसके बाद न जाने किस शैतान ने उद्घोषक के हाथ से माइक्रोफोन छीन लिया और बड़ी ऊंची आवाज में बोला "जी हां जनाब इस मुल्क में कालिदास के बेटे हैं और आर्यभट्ट तथा पाणिनि की औलादें भी मगर यहां चार लोग ही मुल्क के लिए बहुत महत्त्वपूर्ण व्यक्ति माने जाते हैं—राष्ट्रपति मन्त्री संसद् सदस्य और विधान सभा सदस्य। यहां कला विज्ञान और साहित्य के दीपक को आंधी-पानी से बचाने का काम करने वाले या कल-कारखानों में पसीना बहाने वाले इन चारों प्रकार के अति महत्त्वपूर्ण व्यक्तियों की अपोषित प्रजा हैं।"

दर्शक जो शुद्ध कला के प्यासे हैं और जिनकी आंखों पर अब से काली पट्टियां चढ़ी हुई हैं न जाने इसका क्या अर्थ लगाते हैं कि झेरे से करतलध्वनि करते हैं। पीछे बैठे हुए एक दर्शक की पट्टी कुछ ढीली हो गई है। वह पट्टी को कसने लगता है।

माइक पर उद्घोषक कुछ कहने लगता है ।

दिवाकर मलिक प्रकाश बाबू से एक तरह से रो-रो कर कहने लगे, "वर वक्ष वाले ने दस हज़ार रुपये हज़म कर लिए। बहुत दिनो से आपके विभाग मे आर्थिक सहायता के लिए मेरा आवेदन-पत्र पडा हुआ है। साल-भर से कम नही हुआ। कुछ किया आपने ? कुछ रुपये मिल जाते, तो आपके भतीजे को देकर मकान जो गिरवी पडा है, उसका ।"

प्रकाश बाबू ने टोका, "महाराज, आप यह क्या कह रहे हैं ? अब तो उस आवेदन-पत्र पर विचार किया ही नही जा सकता। आपने कन्या के विवाह के लिए आर्थिक सहायता मागी थी और अब कन्या रही नही ।"

"हा, यह तो आपने सही कहा।"

प्रकाश बाबू ने सुझाया, "आप सीधे आदमी ठहरे, और मेरा भी यही हाल है। मैं मिनिस्टर क्या हुआ, लोगो ने समझा कि कारू के खज़ाने की चाबी मेरे हाथ मे आ गई। आप सीधे अपनी आर्थिक विपन्नता का उल्लेख करते हुए एक नया आवेदन-पत्र दीजिए। हालाकि इसमे मुझे दिक्कत होगी, फिर भी कुछ करने का प्रयत्न करूगा।"

"आपके भतीजे साहब दो बार मकान खाली करने का तकाज़ा कर चुके। उन्हे समझा दीजिए कि•• ।"

"वह मैं कह दूगा, परेशान न हो। आप ऐसा कीजिए कि सौ रुपये प्रति माह उसे बतौर किराये के दे दिया कीजिए। वह चुप रहेगा।"

"ये सौ रुपये माहवार मैं कहा से लाऊगा ?"

"कुछ तो करना ही होगा। आपने दखली इजारा लिखा है न।"

दिवाकर मलिक सिर झुकाए सोचते रहे। कुछ समझ मे नही आया, तो यो ही हवा मे बोल गए, "अच्छा, कोई उपाय करता हू।"

"हा, बीच मे मैं पडा हू न ! वह अगले शनिवार को आने वाला भी है। आपने कुछ नही दिया, तो मेरा सर खा जाएगा।" प्रकाश बाबू बोले।

दूसरे ही दिन दिवाकर मलिक ने अपनी विपन्नता का हवाला देते हुए एक आवेदन-पत्र कलाकार सहायता कोष के डायरेक्टर के दफ्तर मे दे दिया।

अद्भुत नृत्य-प्रदर्शन के लिए दिवाकर मलिक को कई स्वर्ण और रजतपदक प्राप्त हुए थे। अगले ही सप्ताह जब प्रकाश बाबू का भतीजा दरवाजे पर खड़ा होकर ज़ोर-ज़ोर से बुरा-भला सुनाने लगा था, दिवाकर मलिक ने अनुरोध के स्वर में कहा, 'आप भीतर चले आइए। मुहल्लेवाले इस बात को नहीं जानते। आइए, किराये के रूप में मैं आपको कुछ सौंपता हूं।" और पेट की आग शान्त करने रहने के क्रम में नगर के ज्वेलर्स की तिजोरियों में जाने से बच गए। पांच स्वर्णपदक और आठ रजतपदक घर में और शेष थे। उनमें से दिवाकर मलिक ने उसे तीन रजतपदक सौंप दिए और वह यह कहता हुआ चला गया कि अगले दो महीने में भीतर घर मकान खाली कर दें वरना उन्हें अदालत इसके लिए मजबूर करेगी। अदालत से आखिर आएगा थाने से पुलिस आएगी और डुगडुगी बजवा कर मकान खाली करा लिया जाएगा।

दो माह होने को आ गए। फिर तीसरा और चौथा माह भी गुजर गया। प्रकाश बाबू का भतीजा इस कदर खामोश हो गया जैसे अब उसे न तो किराया चाहिए और न मकान। आज पूर्वी का परीक्षाफल निकला था। उसने प्रथम स्थान पाया था। जैसे दुखते हुए घाव पर किसी ने मरहम लगा दिया हो। दिवाकर मलिक खुश थे और इसी खुशी में वे गणेश की मिठाई की दुकान से दो रुपए की जलेबियां लाकर धर्मपत्नी से बोले थे, "आज पूजा में भगवान को भी जलेबियों का भोग लगा दो। रोज तो तुलसीदल और चीनी का ही भोग लगाती हो न!

तभी किसी ने दरवाजा खटखटाया। पूर्वी ने दरवाजा खोला तो एक अधेड़ आगन्तुक को सामने पाया। उसने कहा, "दिवाकर मलिक घर में हैं, तो उन्हें भेजो।"

"आप कहां से आए हैं?"

"कचहरी से।"

खबर पाकर दिवाकर मलिक अचरज मे पडे—भला कचहरी से कौन आया ? फिर सोचते-सोचते बैठक में आ गए। उस अधेड आदमी ने बतलाया, "मैं अदालत का नाज़िर हू। कल आपके यहा हम लोग आएगे। मकान आपको खाली करना पडेगा। होशियार हो जाइए।"

"होशियार हो जाऊ, कैसे होशियार हो जाऊ ?" पूछते हुए दिवाकर मलिक जैसे काप गए। इसमे भला कौन-सी होशियारी चल सकती है ? बात तो बिलकुल सच है।

अधेड आदमी ने कहा, "अजी, हाकिम लोग तो सिर्फ दस्तखत करना जानते हैं। कुछ दस्तूरी दीजिए, तो हम मामला कुछ दिनो के लिए दाब दें। आप शरीफ आदमी हैं, मुझे तो बडा अफसोस हो रहा है···हा ··। आज के ज़माने मे लोग पैसा पहचानते हैं, आदमी नहीं।"

"आइए, आप अन्दर आकर बैठ जाइए।" दिवाकर मलिक कापते हुए बोले। और, स्वय भीतर जाकर दमयन्ती से बोले, "भगवान को भोग लगाने के लिए जो जलेबिया ले आया हू, उनमे से कुछ प्लेट मे रखकर दो। कचहरी से नाजिर आया है।"

"पहले देवता को ।"

"अरे भाई, वह देवता से भी बढकर है।" दिवाकर मलिक ने कहा।

कचहरी का नाज़िर ! पुराना पापी है यह जगदम्बीलाल। दोनों हाथो से खाता है, और एक हाथ दूसरे हाथ की कारस्तानी नही जान पाता।

जब वह प्लेट में आयी हुई आधी से अधिक जलेबिया हज़्म कर गया, तो सभ्यता के नाते दिवाकर मलिक ने पूछा, "और ले आऊ ?"

"बस दो-चार, ज्यादा नही।" जगदम्बीलाल बोला।

देवता के नाम पर आयी हुई सारी जलेबियो का आदमी ने भोग लगा लिया और पच्चीस रुपये दक्षिणा मे लेकर चलता बना।

घोर अपमान की कल्पना करते हुए दिवाकर मलिक रात-भर जागते रहे। एक बार धीमे स्वर मे दमयन्ती को पुकारा। जब तक दमयन्ती आखें खोलें तब तक दिवाकर मलिक ने सदा-सदा के लिए आखें बन्द कर ली। सिर बायी ओर लुढक पडा।

"मान्यवर !

निदेशानुसार आपको सूचित किया जाता है कि आपके आर्थिक अभाव सम्बन्धी आवेदन-पत्र पर विचार किया जा चुका है और तदनुसार आपके नाम का 'पेईज एकाउण्ट ओनली' पांच सौ एक रुपये का चेक बनकर कार्यालय में रखा हुआ है। आप किसी कार्यदिवस को आकर यहां से चेक प्राप्त कर लें।

कृपया इस बात को अत्यावश्यक समझें कि इन रुपयों से आप परिवार के उपयोग के लिए जो भी खरीदें उसकी रसीद भी अधोहस्ताक्षरी के कार्यालय में प्रस्तुत करें और प्रत्येक रसीद प्रखण्ड विकास पदाधिकारी द्वारा प्रतिहस्ताक्षरित हो। घी, फल और मिठाइयां कदापि न खरीदें। यदि हमारे कार्यालय का लेखापाल चेक आसानी से न दे बार-बार दौड़ावे तो उसे कैण्टीन में जलपान कराने ले जाइए और उसकी जेब में पांच प्रतिशत की दर से पच्चीस रुपये डाल दें। ऐसा नहीं करने पर आपको जो हैरानी-परेशानी होगी उसके लिए हमारी कोई भी जिम्मेवारी नहीं होगी।

टाइप किया हुआ यह पत्र दिवाकर मलिक के नाम *कलाकार-सहायता* कोष के निदेशक के कार्यालय से तब आया जब दमयन्ती देवी ने एक और *स्वर्णपदक बेचकर उनका श्राद्ध-कर्म कर दिया था।*

पत्र पढ़कर मां-बेटी रोने लगीं।

आज नगर के कला-संस्कृति भवन में बड़ी चहल-पहल थी। लोग आ-जा रहे थे। हाल में एक सुन्दर और बड़ा-सा गोल चबूतरा बना हुआ था। भवन के नौकर उस पर दरियां और चादर झाड़-झाड़ कर बिछा रहे थे। सफाई मजदूरों ने आसपास की सड़क को एकदम साफ-सुथरा कर रखा था। समाचारपत्र में सूचना पहले ही प्रकाशित हो चुकी थी और इससे पहले कई

दिनों तक विभिन्न वर्गों के लोगों की ओर से छोटे-छोटे सवेदनासूचक वयान भी छप चुके थे।

दिवाकर मलिक के असामयिक निधन पर आज शोकसभा आयोजित की गई थी। वक्ताओं की सूची इतनी लम्बी थी कि उन्हे एक चबूतरे पर विठाना और मेढको को तौलना वरावर लग रहा था। सभी दावा कर रहे थे कि दिवाकर मलिक को वे सवसे ज्यादा नजदीक से जानते थे। कोई आपस मे कह रहा था, "मैंने दिवाकर मलिक के घर तेरह वार चाय पी थी और दो वार भोजन किया था।"

कोई कह रहा था, "खादी ग्रामोद्योग भवन मे मैंने तीन वार मलिक जी को कन्सेशन रेट पर कम्वल दिलवाया था।"

किसी ने कहा, "राशनिंग आफिस जाकर रोज राशन कार्ड वना देने के लिए घिघियाते थे। वहा का डीलिंग असिस्टेण्ट मेरा चेला था। मैं दौडा हुआ गया और तीसरे दिन राशन कार्ड वनवा दिया।"

एक ने फुसफुसा कर कहा, "एक वात सवो को नही मालूम होगी। इसे सिर्फ मैं जानता हू। इनकी वडी लडकी का नाम कल्याणी था। वह किसी के साथ भाग निकली, आज तक पता नही चला।"

सुनकर सभा के आयोजक वोले, "महाराज, यही वात मच पर वोलने की कृपा मत कीजिएगा। मर जाने के वाद यहा गुणगान करने की परम्परा, जिन्दा रहने पर चाहे जो कर लीजिए। जिन्दा होने पर गुणो पर पर्दा भी डाल दीजिए, कोई वात नही।"

अध्यक्ष महोदय पधार गए। यह थे—शिक्षा मन्त्री प्रकाश वावू। वह भाषण नही करते थे, वल्कि दहाडते थे। एक साहव आयोजक से वोले, "अव हम लोग दिवाकर परिवार सहायता कोष खोलें और कम-से-कम दस हजार रसीद वही छपवा लें। वडा मजा आएगा।"

किस कारण वडा मजा आएगा, इसे आयोजक महोदय मन-ही-मन समझ गए और मुस्करा कर वोले, "अभी चुप रहिए, वरना यहा एक-से-एक गिद्धराज हाजिर हैं, ले उडेंगे। भला इस वात से कैसे इन्कार किया जा सकता है कि दिवाकर मलिक जैसे लोग तडप-तडप कर भले ही मर जाए, मगर हम जैसे कलाप्रशसको के लिए कल्याण के कई द्वार खोल जाते

है ।'

शोकसभा में बारी-बारी से वक्तागण बोल रहे थे। चबूतर के ठीक पीछे दिवाकर मलिक का एक चित्र टंगा था और उस पर एक वजनदार माला लटक रही थी।

सरकार की ओर से दमयन्ती दिवाकर मलिक की विधवा के नाम एक संक्षिप्त पत्र तभी आता है जब उधर शोकसभा की जा रही है

"सरकार ने निर्णय लिया है कि दिवाकर मलिक के दैनिक उपयोग में आने वाले सब सामान—मूल्य सामग्री पुरस्कार में मिले पदक तथा ताम्रपत्रों का स्मृति-स्मारकस्वरूप राज्य के संग्रहालय में रखा जाए।

आपसे अनुरोध किया जाता है कि आप उपरोक्त सारा सामान पन्द्रह दिनों के अन्दर म्यूज़ियम के क्यूरेटर के पास जमा कर दें। निर्देश का उल्लंघन करने पर सख्त कार्रवाई की जाएगी।"

इधर शोकसभा समाप्त हो रही थी उधर सामने के मैदान में कोई मस्त फकीर एकतारे पर गा रहा था

'यह किसने गीत गाया यह किसने गीत गाया ?
जब शमां बुझ गई तो महफ़िल में रंग आया।

महिला कालेज की रजत जयन्ती मनाई जाने वाली है। वडी धूम है। पूरा कालेज सजाया जा रहा है। एक दिन ही तो और हाथ मे है। वहुत ही वड़े और सफल सास्कृतिक कार्यक्रम की योजना है। लेडी प्रिंसिपल श्रीमती जोशी अत्यधिक व्यस्त देखी जा रही हैं। उन्हें सर खुजलाने तक की फुर्सत नही। राज्य के मुख्य मन्त्री रजत जयन्ती के दिन सारगर्भित भाषण करने वाले हैं। पहले वाले गवर्नर जा चुके हैं। जा क्या चुके हैं, उन्हे गवर्नरी से मुक्त कर दिया गया है। एक वार वह मुल्क के सवसे वडे चौकीदार और चौकीदार के सवसे वडे सलाहकार के यहा पहुचे थे। कला और सस्कृति के विकास के लिए वह चाहते थे कि जिस राज्य मे वह गवर्नर की हैसियत मे रह रहे हैं, वहा के कलाकारो और वुद्धिजीवियो की एक नवीनतम आद्यन्त सूची सरकार अपने पास रखे और एक विभाग की स्थापना की जाए, जिसका काम इनकी सुधि लेना हो। यही स्थिति वह मुल्क के हर अन्य प्रात मे भी देखना चाहते थे।

मुल्क के सवसे वडे चौकीदार के प्रधान सलाहकार ने नाराज होकर कहा था, "आप वहा गवर्नरी करते हैं या कलाकारो-वुद्धिजीवियो का दरवार लगाते हैं ? हमने तो कुछ और ही सोचकर आपको गवर्नर वनाया था। मुझे सूचना मिली है कि आपसे ऐसे लोग विना रोक-टोक मिला करते हैं। यह तो अच्छी वात नही है। प्रोफेसर चाहे अपने विषय का-वृहस्पति क्यो न हो, आखिर वह एक मास्टर की ही हैसियत रखता है न ! और नाचने-गाने वालो की क्या औकात ? राजभवन को तो आपने मुसाफिर-खाना वना रखा है।"

गवर्नर ने तव कहा था, "हा, यह वात सच है। मैं इन लोगो को अपने से वहुत वडा मानता हू।"

प्रधान सलाहकार का तेवर वदल गया था। उसने कहा, "आपको राज्य का खुदा वना कर भेजा गया था और आप वहा जाकर भक्तो के ही

भक्त बन गए। आपके यहाँ के एक मन्त्री आए थे। आपका बयान करते हुए रोने लगे। उनसे ही मालूम हुआ कि राजभवन में इन कलाकारों बुद्धिजीवियों का स्वागत मन्त्रियों के मुकाबले होता है। अब तक हजारों बोतल समन इनको पिलाया जा चुका है। इनके आने पर भी रख जाते है। यह सब खर्च कहाँ से आएगा ?

"मैंने उद्घाटन करने का धन्धा छोड़ दिया है। इस पर बहुत खर्च होता था। पुलिसवाले तंग आ जाते थे"। गवर्नर साहब ने कहा था।

प्रधान सलाहकार की भौंहें तन गई। सुनने को मिला "मुझे तो यह भी बतलाया गया है कि आपसे मिलने के लिए जब कोई कलाकार या बुद्धिजीवी आपके कक्ष में प्रवेश करता है तो आप फौरन उसके सम्मान में उठ कर खड़े हो जाते हैं। उचित तो यह है कि पहले वह झुक कर आपके कदमों को अपनी आँखों से चूमे। सिर ऊपर उठाए, तो उसकी आँखों से आँसू झलक रहे हों। मैं अगर जानता कि आप यह करिश्मा दिखलाएंगे तो कम-से-कम दो महीने आपको किसी मन्त्री के साथ ट्रेनिंग लेने के लिए छोड़ देता। जनतन्त्र में सौ-पचास लोग कैसे खुदा बन जाते हैं, कैसे उनसे मिलना कठिन हो जाता है।

गवर्नर साहब भी तमक गए थे। साफ-साफ कह दिया था "मुझसे ये सारे नाटक नहीं हो सकते। मैं घुटन महसूस करता हूँ।"

अगले महीने गवर्नर साहब की गवर्नरी छीन ली गई। सुना जाता है कि बेचारे अब एक विश्वविद्यालय में पढ़ाते हैं।

इनके बाद दूसरे गवर्नर आए। इनको भी यहाँ रहते चार मास से ज्यादा हो रहे हैं। इस बीच पूर्वी बीस इक्कीस साल की हो गई है। इसने इन बीच के वर्षों में वायलिनवादन की दुनिया में अपना एक अलग अस्तित्व बना लिया है। दो बार विदेशों में हजारों बुद्धिजीवी श्रोताओं के सामने अपनी वादनकला का प्रदर्शन कर अपना एक कीर्तिमान स्थापित कर लिया है। अब उसे और कुछ नहीं चाहिए, बस रुपयों पर जान देती है फिदा रहती है। अपनी कला से साथ उसने धन का वह रिश्ता जोड़ लिया है जो कभी टूटता नहीं। रुपयों के मामले में वह एकदम बेमुरव्वत है।

श्रीमती जोशी अपने दफ्तर मे बैठी कुछ लिख रही थी कि हेड क्लर्क ने आकर सलाम किया और कहा, "पूर्वी मलिक के यहा गया था।"

उनकी ओर मुखातिब होते हुए श्रीमती जोशी ने पूछा, "अच्छा, वह आएगी न ?"

हेड क्लर्क ने उदास स्वर मे कहा, "जी ना।"

"ना ? ना क्यो ?"

"भल्ला पडी और कहने लगी, 'श्रीमती जोशी से कह दीजिएगा, पूर्वी ने मैट्रिक की परीक्षा पास कर ली है। और हा, तीन सिटिंग वजाऊगी। पन्द्रह सौ रुपये देने को तैयार हो, तो अपने कार्यक्रम मे मेरा नाम दीजिए। और जो विना मेरी स्वीकृति के कार्यक्रम मे मेरा नाम दिया, तो कह दीजिएगा, श्रीमती जोशी को कोर्ट का रास्ता देखना पडेगा।' " हेड क्लर्क ने वतलाया।

"पन्द्रह सौ रुपये ?"

"जी हा।" मैंने कहा, "हमारे पास फण्ड नही है। हम सात सौ से ज्यादा नही दे सकते," तो झट वोल पडी, "आप यह रकम भी वचा सकते है। श्रीमती जोशी से कहिए, खुद वजा लें। वह तो डवल एम० ए० है। वह वायलिन हाथ मे उठाएगी और उनकी डिग्रिया राग देश, राग भैरव, राग शकरा यानी जो भी राग चाहेगी, वजाने लगेंगी। मैं तो पन्द्रह सौ मे पन्द्रह पैसे भी छोडने वाली नही। और हा, वार-वार मुझसे पूछताछ न की जाए। श्रीमती जोशी के यहा सगीत-शिक्षिका के पद के लिए मेरा कोई आवेदन-पत्र नही पहुचा है।"

"अच्छा, आप जाइए। मैं सोचूगी। मगर समय भी तो ज्यादा नही रह गया है। पूर्वी मलिक ने यह क्यो कहा कि वह मैट्रिक पास कर चुकी है ? मैट्रिक पास करने और वायलिन वजाने मे क्या तालमेल ?" श्रीमती जोशी वोली।

"पता नही, मुझसे खुल कर इस वारे मे कुछ नही कहा।"

श्रीमती जोशी दफ्तर मे वाहर आती है और एक चपरासी को लेकर चल पडती है—वायलिन की जादूगरनी पूर्वी, दिवाकर मलिक की पुत्री, पूर्वी मलिक से मिलने। उनकी कार सनसनाती हुई आती है और एकाएक

गति धीमी कर दिवाकर मलिक के घर के सामने रुक जाती है। श्रीमती जोशी साड़ी संभालती हुई बाहर निकलती है और आगे बढ़कर दस्तक देती है।

पूर्वी द्वार खोल देती है। कहती है "नमस्ते बैठिए। मगर, ज्यादा समय न लीजिए। आपके कालेज का हेड क्लर्क आया था। मैंने सब कुछ बतला दिया।"

"मैं इसीलिए स्वयं आई हूं आपके पास।" श्रीमती जोशी अत्यन्त नम्रता से कहती हैं।

पूर्वी जैसे पहले से भरी हुई है। कहने लगी "यह आना तो आपके प्रशासन-तन्त्र की एक हरकत है। श्रीमती जी बुरा न मानिएगा। प्रशासक और कुछ जाने या न जाने मगर इतना जरूर जानता है कि किस मौके पर गीदड़ और किस मौके पर शेर बन जाना चाहिए। आपको मैंने हेड क्लर्क से कहलवा दिया था कि मैं मैट्रिक पास कर गई हूं। मालूम हुआ होगा।

"मैट्रिक पास ?"

"हां और वह भी फर्स्ट डिवीजन से। मगर याद रखिए, मैं उतनी ही देर बेहद भावुक रहती हूं जितनी देर वायलिन बजाती रहती हूं। उसके बाद दिमाग में यही बात रहती है कि जितना ज्यादा हो सके इस समाज से अपनी कला का मूल्य वसूला जाए। ओह आप तो परेशान नजर आ रही हैं परेशान न होइए, मैं आपके कालेज में नौकरी मांगने नहीं आ सकती हां आपके कालेज की कुछ छात्राएं संगीतकला में मेधावी होंगी वे गरीब भी हो सकती हैं पैसों से उनकी सहायता कर सकती हूं श्रीमती जोशी मैं उस रास्ते पर बिछ जाऊंगी जिस रास्ते से कलाकारों की भीड़ गुजरेगी मेरे ये होंठ धूल से भले सन जाएं, मगर मैं उनके चरणों को चूमती रहूंगी मगर आपके फंक्शन में बजाने के लिए डेढ़ हजार से एक पैसा कम नहीं लूंगी। इतनी बातें लगातार बोलते-बोलते पूर्वी का चेहरा लाल हो आया और वह फफक-फफक कर रोने लगी। श्रीमती जोशी की समझ में कुछ नहीं आ रहा था।

लगता था जैसे पूर्वी यह सब विक्षिप्तावस्था में बोलने लगी है।

दौडकर घर में जाती है और एक मध्यम आकार का सूटकेस लेकर लौटती है। उसे वडी तेज़ी से खोलती है और तीन चित्र निकालती है। इसी वीच श्रीमती जोशी वोल पडती हैं, "कलाकार आखिर अपने समाज का ही होता है। उसे अपने समाज के लिए ।"

पूर्वी वडी तेज़ी से कहती है, "आप समाज की वातें करती हैं ? देखिए ये तीनो समाज के ही अग थे।" और तीन चित्र श्रीमती जोशी की ओर वढाकर वोलती जाती है, "यह रही कल्याणी मलिक, भरी जवानी जव ढलने लगी और पैसो के अभाव मे वाप शादी न कर सका, तो किसी के साथ भाग गई। तव समाज कहा था ? और इन्हे देखिए—ये हैं मेरी मझली वहन, वागेश्वरी मलिक !—कृष्ण का रूप धारण कर नृत्य करते समय विलकुल कृष्ण वन जाने वाले दिवाकर मलिक की दूसरी पुत्री ! इन्हें गले मे फासी लगाकर ससार छोडना पडा। यह समाज तव भी था। और ये रहे मेरे कलासाधक पिता, दिवाकर मलिक ! परेशानियो और घवराहट मे जिनका हार्ट फेल हो गया 'और यह रही मैं, इनकी अन्तिम पहचान, पूर्वी मलिक ! झूठ क्यो वोलू, मैं पैसे को दातो से पकडती हू, मगर नाजायज ढग से नही, वेईमानी से नही, नीचे की फाइल ऊपर करके नही।"

श्रीमती जोशी ने जैसे निवेदन करते हुए कहा, "आप इस प्रात की लाज हैं। आपने विदेशो तक मे मुल्क का नाम आगे वढाया है।"

"और मेरा वाप क्या इस मुल्क का कूडेदान था ? जाइए, महाप्रभुओ के आगे दुम हिलाइए।" पूर्वी ने एकदम से फटकार दिया।

श्रीमती जोशी एक प्रकार से रोती हुई वाहर निकली और तव दरवाजे पर खडी होकर पूर्वी पागल की तरह ठहाके लगाने लगी।

सोहन प्रिंटिंग सर्विस, शाहदरा दिल्ली-110 38602